पूँजीवादी साम्राज्य
और
आर्थिक शोषण

सय्यद सआदतुल्लाह हुसैनी

विषय-सूची

☆☆☆

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम
'अल्लाह के नाम से जो बड़ा दयावान अत्यन्त कृपाशील है।'

दो शब्द

साम्राज्यवाद स्वयं में ही एक दमनकारी और शोषण पर आधारित व्यवस्था है। लेकिन ज़ब साम्राज्य पूँजीवादियों के हाथ में चला जाए तो इसका परिणाम तदधिक भयावह हो जाता है। पूँजीवादी साम्राज़्य केवल अर्थव्यवस्था पर ही अपना वर्चस्व स्थापित करके शान्त नहीं हो जाता बल्कि उसका शिकार समाज और राजनीति भी होती है और फिर शोषण का एक न समाप्त होनेवाला सिलसिला आरम्भ होता है। उसका शिकार केवल कमज़ोर वर्ग ही नहीं होता बल्कि समूचा वातावरण दूषित होकर रह जाता है। इससे एक ओर सामाजिक भेदभाव उत्पन्न होता है तो दूसरी ओर जलवायु प्रदूषण जैसे संकट उत्पन्न होते हैं। जिसका नतीजा आज हम अपनी आँखों से देख रहे हैं। फिर शिक्षा और रोज़गार इत्यादि के क्षेत्र में सबको समान अवसर न मिल पाने के कारण ग़रीब और अधिक ग़रीब होता चला जाता है तथा पूँजीपति की गाँठ और अधिक मोटी व मज़ूबत होती ज़ाती है। उनकी भोग विलासितापूर्ण जीवन शैली के नतीजे में उपभोकतावाद को बढ़ावा मिलता है। लोगों में उनकी देखा-देखी ज़रूरत से अधिक चीज़ें ख़रीदने की प्रवृत्ति जन्म लेती है। इससे पूँजीवादियों को ब्याज का कारोबार चमकाने का ख़ूब अवसर मिलता है और सामाजिक समस्याएँ विकराल रूप धारण कर लेती हैं।

इस पूरे परिदृश्य में मीडिया बहुत महत्त्वपूर्ण रोल अदा करता है। चूँकि मीडिया पूँजीवाद की कठपुतली होता है इसलिए वह उन्हीं बातों को प्रचारित और प्रसारित करता है जिनमें साम्राज्यवाद का हित होता है।

उपरोक्त परिस्थितियों को सामने रखते हुए जमाअते-इस्लामी हिन्द ने 2008 ई॰ में एक साम्राज्यवाद विरोधी अभियान चलाया था। यह अभियान उन लाखों और करोड़ों लोगों के दिल की आवाज़ थी जो इस पूँजीवादी साम्राज्य के शोषण का शिकार हैं।

इस अभियान में जहाँ एक ओर पूँजीवादी साम्राज्य के शोषण और अत्याचार के नतीजे में होनेवाली तबाहकारियों से लोगों को परिचित कराया गया था वहीं इस्लाम को वैकल्पिक व्यवस्था के रूप में पेश भी किया गया था।

इस अभियान के अवसर पर पुस्तिकाओं की एक शृंखला (Series) प्रकाशित की गई थी जिनमें पूँजीवादी साम्राज्य का विभिन्न पहलुओं से अध्ययन कर उससे होनेवाली तबाहियों को सहज रूप में प्रस्तुत किया गया था और इस्लाम को एक वैकल्पिक व्यवस्था के रूप में प्रस्तुत किया था। इन पुस्तिकाओं की महत्ता और लोकप्रियता को देखते हुए इनको पुनः प्रकाशित किया जा रहा है। चूँकि ये पुस्तिकाएँ 2008 ई॰ में लिखी गई थीं इसलिए इनमें तत्कालिक घटनाओं का उल्लेख भी कहीं-कहीं हुआ है। पाठकों से अनुरोध है कि वे इस बात का ध्यान रखें।

हमें आशा है कि ये पुस्तिकाएँ पाठकों के लिए लाभकारी सिद्ध होंगी।

हमारा पूरा प्रयास रहा है कि प्रूफ़ आदि की दृष्टि से इन पुस्तिकाओं में कोई त्रुटि न रहे। लेकिन यदि कहीं कोई त्रुटि पाई जाए तो पाठकगण हमें अवश्य सूचित करें हम उनके आभारी होंगे।

नसीम ग़ाज़ी फ़लाही
सेक्रेट्री
इस्लामी साहित्य ट्रस्ट (दिल्ली)

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

"अल्लाह कृपाशील, दयावान के नाम से।"

भूमिका

पूँजीवादी साम्राज्य का मूल उद्देश्य विश्व के संसाधनों पर क़ब्ज़ा करना और आर्थिक शक्ति से दुनिया को ग़ुलाम बनाना है। इस उद्देश्य के लिए साम्राज्यवाद विभिन्न रूप अपनाता है। देशों और राष्ट्रों के राजनीतिक मोर्चों पर वह अपने पिट्ठू शासकों को बलात् नियुक्त करता है, उनके द्वारा अपनी नीतियाँ वहाँ की जनता पर थोपता है और स्थानीय व्यवसायों को तबाह करके बड़ी कम्पनियों और पूँजीपतियों के लिए मार्ग प्रशस्त करता है। प्राकृतिक संसाधनों को लूटता है, क़बीलों और स्थानीय आबादियों को उनकी भूमि से बेदख़ल करता है और जो राष्ट्र साम्राज्यवाद के इस मार्ग में अवरोधक बनते हैं उनपर सैनिक कार्रवाई करके सैनिक शक्ति के बल पर उन्हें तबाह और बरबाद करता है। किन्तु जैसा कि ऊपर कहा गया है कि पूँजीवादी साम्राज्य का मूल उद्देश्य संसाधनों और सम्पत्ति पर क़ब्ज़ा करना होता है। अतएव राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक तरीक़े उस मूल उद्देश्य के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं।

इस लेख का उद्देश्य पूँजीवादी साम्राज्य के उन तरीक़ों पर वार्ता करना है, जिनको वह आर्थिक (Financial) लड़ाई में अपनाता है। ये पूँजीवादी साम्राज्य के आर्थिक हथकण्डे ही हैं जिनसे विश्व में आर्थिक संकट उत्पन्न होता है। इस संकट से यूँ तो दुनिया का प्रत्येक देश प्रभावित है किन्तु विशेष रूप से संसार की ग़रीब जनता पर इसका बड़ा गहरा प्रभाव पड़ता है।

पूँजीवादी साम्राज्य और आर्थिक शोषण

ब्याज और सट्टेबाज़ी पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था के दो महत्वपूर्ण आधार हैं। इन दोनों के द्वारा साम्राज्यवाद को इस बात का अवसर मिलता है कि वह वैश्विक संसाधनों पर क़ब्ज़ा करे और विश्व स्तर पर पूँजी के विनिमय और हस्तान्तरण को अपनी मर्ज़ी और ज़रूरत के अनुसार नियन्त्रित करे। बाज़ारों पर प्रभावी हो और ग़लबा हासिल करे और दुनिया की सम्पत्ति को समेट कर कुछ हाथों में केन्द्रित कर दे।

ब्याज और जुए के द्वारा वैश्विक आर्थिक व्यवस्था असुदृढ़ता या अस्थिरता (Instability) का शिकार हो जाती है। पूँजीपति इस अस्थिरता का शोषण करता है।

ब्याज और जुए के अतिरिक्त वैश्विक आर्थिक संस्थान (जो वैश्विक आर्थिक व्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग हैं) भी पूँजीवादी साम्राज्य के लिए अपने उद्देश्य की पूर्ति के महत्वपूर्ण और प्रभावकारी साधन हैं। उन संस्थानों को इस्तेमाल करते हुए ऐसी नीतियाँ दुनिया पर और विशेष रूप से तीसरी दुनिया से सम्बन्धित ग़रीब देशों पर थोपता है, जिसके नतीजे में उसके लिए अपने एजेण्डे को पूरा करना आसान हो जाता है।

ब्याज

ब्याज (Interest) पूँजीवादी व्यवस्था का महत्वपूर्ण आधार है। ब्याज की तबाहकारियों को समझने के लिए अमरीका के आर्थिक संकट का उदाहरण पर्याप्त है। आर्थिक संकट के विश्लेषकों में इस बात पर लगभग मतैक्य पाया जाता है कि इसका आरम्भ उस ऋण से हुआ–है जो ब्याज़ पर दिया जाता है।

ब्याज पर आधारित व्यवस्था सबसे पहले निर्बाध रूप से ख़र्च करने और आवश्यकता से अधिक व्यय करने का स्वभाव बनाता है। जब लोग अपनी सम्पूर्ण पूँजी ख़र्च कर देते हैं, इसके बाद ही ब्याज खानेवालों का कारोबार शुरू होता है। अतएव सूदी कारोबार के लिए, विशेष रूप से उपभोक्ता सम्बन्धी ऋण के कारोबार की उन्नति के लिए, यह आवश्यक है कि लोग अपनी आय से अधिक ख़र्च करें, इसलिए ब्याज-व्यवस्था लोगों को आय से अधिक भोग-विलास की प्रेरणा देती है। विज्ञापनों की चकाचौंध से लोगों को ज़्यादा-से-ज़्यादा ऐश करने और भोग-विलास पर उभारा जाता है और उन्हें ख़रीदने के लिए आसान क़र्ज़ उपलब्ध कराए जाते हैं। क़र्ज़ों के भुगतान के लिए और अतिरिक्त क़र्ज़ का प्रस्ताव होता है। इस प्रकार क़र्ज़ के जाल में व्यक्ति को फँसा दिया जाता है।

पूँजीवादी व्यवस्था के सबसे बड़े केन्द्र अमेरिका में घरेलू क़र्ज़ (Household Debts) 1970 से प्रतिवर्ष बढ़ते रहे; यहाँ तक कि वर्तमान आर्थिक संकट के पश्चात् 2009 ई॰ में उनमें कमी आई। 1975 ई॰ में कुल घरेलू क़र्ज़ 743 बिलियन डॉलर था, जो कुल आमदनी का 60% था। 2000 ई॰ में यह क़र्ज़ 7000 बिलियन डॉलर और 2008 ई॰ में 13794 बिलियन डॉलर हो गया।[1] यह आय का 134% था। मानो अमेरिकी अपनी आय से 34% अधिक ख़र्च कर रहे थे। 2008 ई॰ में एक अमेरिकी के पास औसतन 13 क्रेडिट कार्ड थे; जिनके द्वारा वह अपनी आय से कहीं अधिक ख़र्च करने में लगा हुआ था। 43% अमेरिकी परिवार अपनी आय से अधिक ख़र्च कर रहे थे।[2] ख़र्च करने की इस दीवानगी ने अमेरिका में बचत बिलकुल कम कर दी थी। अमेरिकी स्वास्थ्य विभाग के अनुसार भावी वर्षों में रिटायर होनेवाले 96 प्रतिशत अमेरिकी दान और सदक़ों पर निर्भर होंगे। अर्थात जीवन भर कमाने के पश्चात् उनके पास इतनी बचत नहीं होगी कि वे अपना बुढ़ापा चैन से गुज़ार सकें।[3]

---

1. "Flow of Funds Accounts of the United States, "FEDERAL RESERVE" Statistical Release, Z1 September 2009, p. 8
2. A.B. Kennickel et. al. "Changes in Family Finances from 1989 to 1992", Federal Reserve Bulletin, Oct. 1994. P. 864-865.)
3. Senator Troy Fresor "Money Matters : Financial Fitness for Life Begins in Public Schools" on the website of the senate of Texas.

लोगों के ख़र्च करने के इस स्वभाव से दोनों प्रकार के पूँजीपतियों का लाभ था। एक तो वे पूँजीपति थे जो उपभोग-सामग्री के उत्पादन में व्यस्त थे। उन्हें ख़ूब उत्पाद करने और लाभ कमाने का अवसर मिल रहा था और दूसरी ओर वे पूँजीपति थे जो लोगों को ख़र्च करने के लिए सूदी (ब्याज वाले) क़र्ज़ जारी कर रहे थे और उनके ब्याज से लाभ कमा रहे थे।

अतएव ब्याज खानेवालों ने नित नए तरीक़ों से लोगों को क़र्ज़ देना शुरू कर दिया। घर बनाने के लिए क़र्ज़, कार ख़रीदने के लिए क़र्ज़ आदि अमेरिकी आर्थिक जीवन का अनिवार्य अंग बन गया। इससे आगे बढ़कर दैनिक उपभोग की वस्तुओं की ख़रीदारी के लिए भी क़र्ज़ दिए जाने लगे और क्रेडिट कार्ड्स जारी किए गए, जिनके द्वारा लोग क़र्ज़ पर चीज़ें प्राप्त कर सकते थे। यहाँ तक कि क़र्ज़ देनेवालों की मार्केट पूर्ण Saturate हो गई, किन्तु ब्याज खानेवालों की हवस (लालसा) ख़त्म नहीं हुई। उन्होंने क़र्ज़ लेनेवालों की नई मार्केटों की तलाश शुरू की और उन ग़रीब और निर्धन लोगों की ओर उन्मुख हुए जो कोई ज़मानत न होने के कारण बैंकों से क़र्ज़ नहीं ले सकते थे।

उन ग़रीबों को घर बनाने के लिए क़र्ज़ दिए गए। उन्हें सब-प्राईम क़र्ज़दार (Sub-prime Borrowers) कहा जाता है। चूँकि उन्हें क़र्ज़ देना ख़तरे से ख़ाली न था और बैंक उन्हें क़र्ज़ नहीं देते थे, अतः मध्यम निवेश बैंक (Middle Investment Bank) अस्तित्व में आए। उन्होंने बैंकों से ब्याज पर क़र्ज़ लिया और ब्याज दर बहुत अधिक बढ़ाकर ग़रीब क़र्ज़दारों में वितरित कर दिया। अतएव सब-प्राइम क़र्ज़दारों को 30-32% की ब्याज दर पर भी क़र्ज़ दिए गए। शीघ्र और अधिक से अधिक लाभ कमाने के लालच में उन कम्पनियों ने उन क़र्ज़ों को सिक्योरिटीज़ में बदला और M.B.S. या C.D.O. के रूप में दोबारा पैक करके बेचना शुरू किया। इस प्रकार उन क़र्ज़दारों से संबद्ध जोखिम (Risk) पूरी व्यवस्था में फैल गया।

जब इन्वेस्टमेंट बैंकों (निवेश बैंकों) ने आसान वृद्धि ब्याज से लाभ कमाना आरम्भ किया तो इस बहती गंगा में हाथ धोने के लिए इंश्योरेंस कम्पनियाँ भी मैदान में कूद पड़ीं। उन्होंने उन क़र्ज़ों को इंश्योर किया।

इस प्रकार बड़े बैंक, इंवेस्टमेंट कम्पनियाँ, सिक्योरिटीज़ ख़रीदनेवाले, इंश्योरेंस कम्पनियाँ सभी एक ही समय में ग़रीब सब-प्राइम क़र्ज़दारों से अपने-अपने हिस्से का ब्याज कमाना चाह रहे थे।

फ़ैडरल बैंक ने ब्याज की दर में मामूली वृद्धि की और इसके साथ ही पूरी व्यवस्था छिन्न-भिन्न होना शुरू हो गई। ग़रीब क़र्ज़दार क़र्ज़ वापस नहीं कर सके। उनपर आधारित सिक्योरिटीज़ के दाम गिरने लगे और श्रृंखलीय अभिक्रिया (Chain Reaction) के नतीजे में पूरी व्यवस्था रेत के घरौंदे की तरह बैठ गई।[1]

इस संकट से ज्ञात होता है कि ब्याज पर आधारित क़र्ज़ कितने ख़तरनाक होते हैं और कैसे वे पूरी व्यवस्था में अस्थिरता पैदा करते हैं।

ब्याज सरासर अन्याय है

ब्याज न्याय की अपेक्षाओं के विपरीत है। यदि ब्याज सहित क़र्ज़ मौलिक मानवीय आवश्यकताओं के लिए दिया जाए तो बात अत्यन्त अमानवीय होगी कि किसी मजबूर व्यक्ति की मौलिक आवश्यकताओं को पूँजीपति लाभ कमाने का साधन बनाए और बजाए इसके कि ब्याज रहित क़र्ज़ के द्वारा उसकी सहायता करे, ब्याज के द्वारा उसका ख़ून चूसने की कोशिश करे। और यदि ब्याज सहित क़र्ज़ किसी उत्पादन के काम या व्यापार के लिए दिया जाए तब भी यह बात अन्यायपूर्ण है कि व्यापार में लाभ या हानि प्रत्येक स्थिति में निश्चित राशि ब्याज स्वरूप ली जाए। यदि व्यापार में लाभ बहुत अधिक हो तो यह क़र्ज़ देनेवाले के साथ अन्याय है कि उसे बहुत ही साधारण लाभ पर सन्तोष करना पड़े और यदि व्यापार में बहुत कम लाभ हो या घाटा हो तो यह व्यापारी के साथ अन्याय है कि उसे घाटे के बावजूद निश्चित रक़म ब्याज स्वरूप देनी पड़े। डॉ॰ निजातुल्लाह सिद्दीक़ी साहब ने इस विषय पर बहुत

1. इस संकट की विस्तृत जानकारी के लिए देखें : Kelvin Phillips (2009) "Bad Money : Reckless Finance, Failed Politics, and the Global Crisis of American Capitalism", Penguin, New York. और इस संकट के बहुत ही सादा और आसान विवरण के लिए देखिए : http://news.bbc.co.uk/2/hi/business/7073131.stm और http://specials.rediff.com/money/2008/sep/25slid1.htm

विस्तृत वार्ता की है। (Siddiqui, M.N. Muslim Economic Thinking - Asurvey of contemporory Litarature-P-63)

ब्याज पर आधारित अर्थव्यवस्था अस्थिर होती है

ब्याज पर आधारित व्यवस्था की अनिवार्य विशेषता यह होती है कि इसमें अस्थिरता होती है। और उन्नति (Growth) और मंदी (Recession) के चक्कर एक के बाद दूसरे आते रहते हैं।

जब ब्याज-दर कम होती है तो लोग बचत (Saving) नहीं करते और उनका रुझान अधिक से अधिक क़र्ज़ लेने और ख़र्च करने की ओर माइल होता हैं। इसके नतीजे में ख़र्च करने के रुझान में अभिवृद्धि होने लगती है। शॉपिंग मॉल आबाद हो जाते हैं। गाड़ियाँ ख़रीदनेवालों की क़तार लग जाती है। प्रत्येक व्यक्ति घर बनाना और फ़्लैट ख़रीदना चाहता है। बैंक घर बनाने और कार ख़रीदने आदि के लिए ही नहीं, टी-शर्ट ख़रीदने और होटल में छुट्टी गुज़ारने के लिए भी क़र्ज़ों की पेशकश करते रहते हैं। परिणामस्वरूप माँग बढ़ जाती है। कम्पनियाँ प्रोडक्शन बढ़ा देती हैं। प्रोडक्शन बढ़ने से रोज़गार के अवसर बढ़ते हैं। शहरों की चकाचौंध बढ़ती है।

यह दौर कुछ ही समय में अपनी पराकाष्ठा को पहुँचता है और फिर ब्याज अपने चमत्कार दिखाना शुरू करता है। इसके बाद इसके अनिवार्य परिणाम के रूप में एक-दूसरा दौर शुरू होता हैं।

माँग बढ़ने के क़ारण चीज़ें महँगी होने लगती हैं। उपभोग और उत्पादन बढ़ने से क़र्ज़ों की माँग बढ़ जाती है। एक ओर उपभोक्तागण भी क़र्ज़ों के लिए बड़े पैमाने पर बैंकों की ओर रुख़ करते हैं, दूसरी ओर उत्पादक भी तेज़ी के साथ उत्पादन बढ़ाने के लिए अधिक से अधिक क़र्ज़ हासिल करना चाहते हैं। फिर बचत में कमी के कारण बैंकों के पास पूँजी की कमी होने लगती है। पूँजी (बचत) की कमी और ऋणों (क़र्ज़ों) की माँग में वृद्धि ब्याज की दरों में वृद्धि का कारण बनती है।

मन्दी (Recession) का दौर

महँगाई के कारण ख़र्च में कमी। ख़र्च में कमी के कारण उत्पादन में कमी, अधिक ब्याज दर के कारण बचत में वृद्धि।	← अधिक ब्याज दर	चीज़ों की माँग में वृद्धि के कारण क़ीमतों में वृद्धि, बचत में कमी के कारण ब्याज दर में अभिवृद्धि (महँगाई)।

कम ब्याज दर

ख़र्च में वृद्धि, क़र्ज़ों में वृद्धि, चीज़ों की माँग में वृद्धि, बचत में कमी।	→	उत्पादन में वृद्धि, क़र्ज़ों और पूँजी की माँग, बचत में कमी के कारण पूँजी में कमी।

ब्याज दर बढ़ते ही प्रतिक्रिया शुरू हो जाती है। बढ़ती हुई महँगाई और ब्याज की बढ़ती हुई दर लोगों को क़र्ज़ लेने और ख़र्च करने से रोकती है; निराशा और आशंकाएँ बढ़ जाती हैं। फलस्वरूप लोग बचत करने लगते हैं। माँग कम हो जाती है। कम्पनियों का उत्पादन (Production) घट जाता है। रोज़गार के अवसर कम हो जाते हैं। यह दौर मंदी का दौर (Recession) कहलाता है।

एक के बाद दूसरे ख़ुशहाली और मंदी के ये चक्कर ब्याज के डायनामिक्स का लाज़मी हिस्सा है। नोबल पुरस्कार प्राप्त अर्थशास्त्री मिल्टन फ़्राइडमैन का कथन इस्लामी आर्थिक क्षेत्रों में बहुत प्रसिद्ध हुआ। उन्होंने कहा—

> "What accounts for this unprecedented erratic behaviour of the US economy? The answer that leaps to mind is the corresponding erratic behaviour of interest rate." (Newsweek, December 5th 1982, Milton Friedman.)

"अमेरिकी अर्थव्यवस्था की इस बेमिसाल ग़लत नीति का कारण क्या है? तात्कालिक उत्तर जो दिमाग़ में आता है वह यह है कि इसका कारण ब्याज दरों की ग़लत नीति है।"

इन चक्करों से बड़े पूँजीपतियों का ख़ास नुक़सान नहीं होता, अलबत्ता दुनिया के ग़रीब लोग बुरी तरह प्रभावित हो जाते हैं।[1]

ब्याज से धन के संकेन्द्रीकरण (Concentration) में वृद्धि होती है

पूँजीवादी व्यवस्था का मूलोद्देश्य संसार के ग़रीबों की संपत्ति को थोड़े हाथों में केन्द्रित करना है। ब्याज इस उद्देश्य की पूर्ति का एक बड़ा साधन है।

ब्याज पर आधारित व्यवस्था में संसार के अरबों ग़रीब लोग अपने जीवनभर की कमाई बैंकों में जमा रखते हैं। बैंक इसपर उन्हें मामूली दर पर ब्याज देता है। बड़े बैंक, विशेष रूप से घरेलू बैंक, छोटे व्यापारियों और कारीगरों को क़र्ज़ नहीं देते। उनके क़र्ज़ बड़े-बड़े पूँजीपतियों के लिए ख़ास होते हैं।

इस प्रकार दुनिया के आम लोगों की यह कुल दौलत कुछ ही पूँजीपतियों (जिनकी संख्या बचत करनेवालों की विशाल बहुसंख्या की तुलना में बहुत कम होती है) के सुपुर्द की जाती है। ये लोग उस धन को अपने व्यापार के द्वारा कई गुना बढ़ा देते हैं। इस असीम लाभ का बहुत छोटा-सा हिस्सा पूँजी के वास्तविक मालिकों को लौटता है। बड़ा हिस्सा व्यापारियों की जेबों में चला जाता है। इस प्रकार धन निरन्तर बचत करनेवालों की बड़ी बहुसंख्या से बड़े व्यापारियों की छोटी-सी अल्पसंख्या को स्थानांतरित होता रहता है। इस प्रकार धन का संकेन्द्रीकरण होता जाता है और ग़रीब जनता और ज़्यादा ग़रीब और अमीर और ज़्यादा अमीर होते जाते हैं।

1. इन चक्करों को समझने के लिए पढ़िए— Todd A. Knoop; Recessions and Depressions Understanding Business Cycles Praeger. Place of Publication : Westport, CT (2004).

उन्नति (Growth) का दौर

रेखाचित्र (ख़ाका) : ब्याज आर्थिक अवस्था में अस्थिरता पैदा करता है और ब्याज पर आधारित व्यवस्था में उन्नति और अवनति (मंदी) के चक्र (Cycles) एक के बाद दूसरे आते रहते हैं—
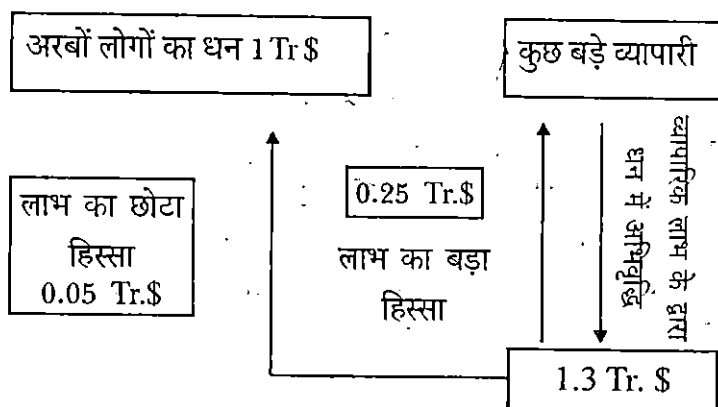
लाभ का मामूली हिस्सा ब्याज के रूप में बचत करनेवालों को मिलता है और ब्याज के द्वारा कमाया हुआ धन कुछ हाथों में केन्द्रित हो जाता है।

उपरोक्त रेखाचित्र (ख़ाके) में यह मान लिया गया है कि दुनिया के लोगों ने अपनी कुल संपत्ति एक ट्रेलियन डॉलर बैंकों में जमा कराई। बैंक उस धन को व्यापारियों की एक छोटी-सी संख्या के सुपुर्द करेंगे, जो उसे 30% की दर से 1.3 ट्रेलियन बना देंगे। 300 बिलियन डालर के लाभ में से एक छोटा-सा हिस्सा (17% की दर से) 70 बिलियन डॉलर ब्याज के रूप में पूँजी के अस्ल मालिकों की बड़ी तादाद को लौटेगा और शेष 230 बिलियन डालर व्यापारी ले उड़ेंगे।

इस प्रकार दुनिया के बचत करनेवाले ग़रीब लोग जो बहुसंख्या में हैं अपना धन बरबाद कर रहे हैं और थोड़े से पूँजीपति अपना धन बेपनाह बढ़ा रहे हैं।

जेम्स राबर्टसन लिखते हैं –

"The pervasive role of interest in the economic stystem results in the systematic transfer of money from those who have less to those who have more. Again, this transfer of resources from poor to rich has been made shockingly clear by the third world debt crisis. But it applies universally." (James Robertson, Future Wealth : A New Economics for the 21st Century, TOES Books, Bootstrap Press, N.Y., 1990.)

"आर्थिक व्यवस्था में ब्याज की सार्वभौमिक भूमिका का परिणाम यह होता है कि धन उन लोगों से, जिनके पास धन कम है, सुव्यवस्थित तरीक़े से उन लोगों को स्थानांतरित होने लगता है जिनके पास धन अधिक है। ग़रीबों से अमीरों को संसाधन का यह स्थानांतरण तीसरी दुनिया के क़र्ज़ों की वस्तुस्थिति से स्पष्ट होता है, किन्तु यह वस्तुस्थिति सारी दुनिया में मौजूद है।"

ब्याज एक धोखा है

किसी भी देश में हर तरह की करेंसी बैंकों के द्वारा जारी होती है। बैंक उसे क़र्ज़ों के रूप में जारी करते हैं और उन क़र्ज़ों पर ब्याज भी लगाते हैं। उन्हीं क़र्ज़ लेनेवालों के माध्यम से करेंसी मार्केट में आती है।

मान लीजिए कि किसी देश में केन्द्रीय बैंक ने सौ करोड़ रुपये के नोट जारी किए हैं। स्पष्ट है कि यही सौ करोड़ रुपये मार्केट में मौजूद रहेंगे। बैंक उन सौ करोड़ रुपयों को क़र्ज़ों के रूप में जारी करेगा। अब बैंक ब्याज के साथ 110 करोड़ रुपये प्राप्त करना चाहता है। मार्केट में केवल 100 करोड़ रुपये हैं। ये बढ़े हुए 10 करोड़ रुपये, जो बैंक ब्याज के रूप में लेना चाहता है, वह मार्केट में मौजूद ही नहीं हैं। इसकी अदायगी के लिए या तो बैंक बढ़े हुए अतिरिक्त नोट छापता है जिससे महँगाई में वृद्धि के द्वारा आम आदमी पर बोझ पड़ता है या कुछ लोगों को क़र्ज़ की अदायगी के लिए अतिरिक्त क़र्ज़ लेना पड़ता हैं, जिससे

क़र्ज़ के कभी न ख़त्म होनेवाले चक्कर चलते हैं। निजातुल्लाह सिद्दीक़ी साहब लिखते हैं–

> "In money terms, there is not sufficient money to meet all payment obligations, in view of the interest added to the principal that came out as newly created money. The only way out is to renew some of the outstanding debt or monetize it (by exchanging newly printed currency for debt papers.) The debt based system of creating new money and financing productive enterprises necessitates ever increasing volume of debts. It is difficult to imagine how these debts can ever be paid. To lighten the burden of debt a severe about of inflation will be necessary with all its unhealthy consequences."

> "आर्थिक दृष्टिकोण से वास्तविक पूँजी में ब्याज की अभिवृद्धि के कारण देय ऋण के भुगतान के लिए पर्याप्त रक़म उपलब्ध नहीं रहती। इसका हल यह होता है कि या तो कुछ ऋणों का नवीनीकरण किया जाए या नई करेंसी छापकर इसके क़र्ज़ के दस्तावेज़ों से विनिमय किया जाए। नई नक़दी की संरचना और उसके द्वारा उत्पादक कामों के निवेश के ऋणों पर आधारित व्यवस्था में ऋणों में निरंतर अभिवृद्धि ज़रूरी होती है। ये ऋण किसी प्रकार कभी अदा हो सकेंगे, इसकी कल्पना करना भी दुर्लभ है। क़र्ज़ों के बोझ को कम करने के लिए मुद्रास्फीत का एक सख़्त झटका अपनी तमाम विनाशों के साथ ज़रूरी हो जाता है।"

इस प्रकार ब्याज़ पर आधारित व्यवस्था अस्ल में एक धोखा है। पूरे तौर पर कृत्रिम तरीक़ों से पूँजीपतियों के लिए कृत्रिम धन पैदा किया जाता है और उसका बोझ आम आदमी पर पड़ता है।[1]

1. बैंकों के इस मामले को विस्तार से समझने के लिए देखिए पुस्तक : The Mystery of Banking. MURRAY N. ROTHBARD: Ludwig von Mises Institute Alabama (2008)

ब्याज से जन कल्याण के काम और कम लाभ देनेवाले उद्योग प्रभावित होते हैं

चूँकि प्रायः उद्योग बैंकों से प्राप्त होनेवाली पूँजी पर निर्भर होते हैं, इसलिए ब्याज पर आधारित व्यवस्था में किसी भी उद्योग में काम करने के लिए कम से कम उतना लाभ पैदा करना अनिवार्य है, जिससे बैंक के ब्याज का भुगतान किया जा सके। इनसानी ज़रूरतें हर प्रकार के उद्योगों से जुड़ी होती हैं। कुछ उद्योग अधिक दर पर लाभ देते हैं, जबकि कुछ कम दर पर। यदि किसी उद्योग का लाभदर ब्याज से कम हो तो वह उद्योग चल ही नहीं सकता।

परिणाम स्वरूप बहुत-से ऐसे उद्योग, जिनसे ग़रीब-निर्धन जनता के कल्याण और भलाई संबद्ध हो, एक ब्याज़ पर आधारित व्यवस्था में पनप ही नहीं सकते। मिसाल के तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में अस्पताल इसलिए नहीं चल सकते कि यहाँ बैंक की ब्याज दर पर अधिक लाभ मिलने की संभावना नहीं होती। छोटे शहरों में भी रोग-जाँच के बड़े यंत्र (जैसे एम॰ आर॰ आई॰ मशीन) नहीं लगाए जा सकते। इसलिए कि बैंक का ब्याज अदा करने के बाद पूँजीधारी के पास कुछ नहीं बचता। इस प्रकार बहुत सारे उद्योग जो 2-3 प्रतिशत से 10-15 प्रतिशत तक की परिधि में लाभ देते हैं, एक ब्याज पर आधारित व्यवस्था में अव्यावहारिक होते हैं। प्रायः वे संस्थान जिनका सम्बन्ध जनकल्याण और भलाई के कामों (जैसे निर्धनों और मध्यम वर्ग के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, रिसर्च और लेखनकार्य वग़ैरह) से होता है, इसी श्रेणी में आते हैं। इसलिए एक ब्याज पर आधारित व्यवस्था जनकल्याण और भलाई के कामों की हत्या करनेवाली होती है। अधिक लाभ देनेवाली संस्थाएँ भी हर प्रकार की स्थितियों में अधिक लाभ नहीं देतीं। अतएव विशेष रूप से मंदी के दौर में संभावित लाभ, ब्याज दर से कम हो तो कोई व्यापारी, व्यापार का जोखिम लेना नहीं चाहता। नतीजे के तौर पर अधिक लाभ की प्रतीक्षा

में पूँजी बेकार पड़ी रहती है। इस स्थिति को 'स्टैगफ़्लेशन' (Stagflation) कहते हैं। यह स्थिति भी ब्याज पर आधारित व्यवस्था की अनिवार्य विशेषता है। इसके नतीजे में मंदी की हालत और ज़्यादा सख़्त हो जाती है और पूरी अर्थव्यवस्था पर सक्ता-सा छा जाता है।

इस प्रकार ब्याज और ब्याज पर आधारित वैश्विक अर्थ-व्यवस्था इनसानों का ख़ून चूसने और उनके माल की क़ीमत पर कुछ गिने-चुने पूँजीपतियों को फ़ायदा पहुँचाने का साधन है।

सट्टेबाज़ी

पूँजीवादी व्यवस्था का दूसरा महत्वपूर्ण हथियार सट्टेबाज़ी है। साम्राज्य ने सट्टे की बहुत सी नई-नई क़िस्में पैदा कर रखी हैं और आधुनिक आर्थिक बाज़ारों मे प्रत्येक स्तर पर सट्टा होता है। इसलिए कुछ लेखकों ने इस व्यवस्था ही को "सट्टेबाज़ पूँजीवादी व्यवस्था" (Casino Captalism) का नाम दिया है।

कुछ अनुमानों के अनुसार, इस समय दुनिया में प्रतिदिन लगभग 2 ट्रेलियन डॉलर सट्टेबाज़ी (Speculation) में लगते हैं। जबकि वस्तुओं का वास्तविक क्रय-विक्रय केवल 30 बिलियन डॉलर (सट्टेबाज़ी का केवल 1.5%) का होता है। ब्रिटिश अर्थशास्त्री स्यूसान स्ट्रेंजेज़ (Susane Stranges) ने इस पर टिप्पणी करते हुए सही लिखा है–

> "The western financial system is rapidly coming to resemble nothing as much as a vast casino. Every day games are played in this casino that involve sums of money so large that they cannot be imagined. At night the games go on at the other side of the world. In the towering office blocks that dominate all the great cities of the world, rooms are full of chain-smoking young men all playing these games. Their eyes are fixed on computer screens flickering with changing

prices. They play by intercontinental telephone or by tapping electronic machines. They are just like the gamblers in casinos watching the clicking spin of a silver ball on a roulette wheel and putting their chips on red or black, odd or even ones." (Susan Strange (1997) "Casino Capitalism", Manchester UNI, Press, Manchester, p-1)

"पश्चिमी देशों की आर्थिक व्यवस्था एक बड़े जुआ-गृह के सदृश होती जा रही है। प्रतिदिन उस जुआ-गृह में इतनी बड़ी रक़मों के जुए खेले जाते हैं जिनकी कल्पना करना भी कठिन है। सुबह दुनिया के एक भाग में गेम शुरू होता है और रात होते ही गेम (खेल) दुनिया के दूसरे भाग में स्थानान्तरित हो जाता है। (इसी प्रकार चौबीस घण्टे गेम जारी रहता है।) दुनिया के तमाम बड़े शहरों की गगन-चुम्बी इमारतों में स्थित कार्यालयों के कमरे, सिगरेट पर सिगरेट पी रहे ऐसे नवयुवकों से भरे हुए हैं जो इस गेम में हर समय व्यस्त हैं। उनकी आँखें क़ीमतों में पल-पल के उतार-चढ़ाव को प्रकट कर रही कमप्यूटरों की स्क्रीनों पर टिकी हुई हैं और इलेक्ट्रानिक मशीनों और अन्तर महाद्वीपी टेलीफ़ोनों के द्वारा वे यह खेल खेल रहे हैं। इनमें और उन जुआरियों में कोई अन्तर नहीं है, जिनकी नज़रें घूमते हुए पहिए के सिलवर बॉल पर टिकी होती हैं। वे लाल या काला, सम, विषम आदि पर अपनी चिप्स फेंकते रहते हैं।"

सट्टेबाज़ी के विभिन्न प्रकार जो बाज़ार में प्रचलित हैं, उनमें से कुछ एक का नीचे उल्लेख किया जा रहा है—

वस्तुओं (Commodities) में सट्टा

01 अप्रैल

- किसान अक्तूबर में आनेवाली अनाज की फ़सल एक लाख रुपये में बेचता है। प्रत्येक स्थिति में किसान को एक लाख रुपये ही मिलेंगे।
- इस वादे पर आधारित एक दस्तावेज़ किसान सट्टेबाज़ के सुपुर्द कर देता है कि अक्तूबर में किसान को एक लाख रुपये मिलेंगे और दस्तावेज़ के मालिक के सुपुर्द फ़सल करनी होगी।

↓

05 अप्रैल

सट्टेबाज़ यह दस्तावेज़ लेकर मुम्बई Commodities Exchange पहुँचता है। वहाँ वह फ़सल की तारीफ़ करके और अधिक आमदनी की उम्मीद पैदा करके उस दस्तावेज़ को 1.5 लाख में बेच देता है।

↓

अप्रैल से अक्टूबर

- इस दौरान यह दस्तावेज़ विभिन्न सट्टेबाज़ों के बीच विक्रय होती रहती है।
- मूल्य अच्छे आने की संभावनाएँ होती हैं तो दस्तावेज़ की क़ीमत बढ़ जाती है। और जब मूल्य की संभावनाएँ कम होती हैं तो उसकी क़ीमत भी कम हो जाती है।
- सट्टे बाज़ कृत्रिम तरीक़ों से दाम बढ़ाने की कोशिश करते रहते हैं।

↑

अक्तूबर

- इस दौरान दस्तावेज़ की क़ीमत तीन लाख हो जाती है।
- अनाज का थोक-व्यापारी जिसे वास्तव में अनाज ख़रीदना है, इस दस्तावेज़ को तीन लाख में ख़रीदता है और किसान से अनाज प्राप्त करता है।

↑

अक्तूबर के बाद

- उपभोक्ताओं को अनाज तीन लाख से भी अधिक क़ीमत (आवाजाही के ख़र्च, थोक और फुटकर व्यापारियों का लाभ मिलाकर) में मिलता है।
- किसान को एक लाख मिले, वह नुक़सान में रहा; उपभोक्ता तीन लाख से अधिक मूल्य दे रहे हैं, वे भी नुक़सान मे रहे। सारा लाभ बीच के सट्टेबाज़ ले उड़ते हैं।

ख़ाका : वस्तुओं (Commodities) के हवाले से

फ़्यूचर ट्रेड क्या है?

यह वास्तव में वस्तुओं के भविष्य का व्यापार (Future Trading) है। एक किसान जिसकी फ़सल जनवरी में आने की आशा है, वह अपनी फ़सल का अनुमान लगाकर मई के महीने ही में एक दस्तावेज़ पर अपनी फ़सल एक निश्चित रक़म (मान लीजिए एक लाख रुपये) में बेचने का वादा करता है। इस प्रकार फ़सल और उसका मूल्य तय पाता है। अब फ़सल

अच्छी हो या ख़राब, हर हालत में उसे एक लाख में बेचना है।

इस दस्तावेज़ को लेकर सट्टेबाज़ भावी बाज़ार में अगस्त से जनवरी तक सट्टेबाज़ी करते रहते हैं। यह दस्तावेज़ इस मुद्दत में विभिन्न हाथों से गुज़रता है। फ़सल के अन्दाज़े के आधार पर उस दस्तावेज़ का मूल्य कम-ज़्यादा होता रहता है। प्रोपगण्डों, दुष्प्रचारों आदि का प्रयोग करते हुए कृत्रिम तरीक़ों से दस्तावेज़ का मूल्य बढ़ाया जाता है। यहाँ तक कि जनवरी के आते-आते उस दस्तावेज़ का मूल्य (मान लीजिए) तीन लाख हो जाता है और फ़सल के अन्तिम ख़रीदार को तीन लाख में फ़सल ख़रीदनी पड़ती है।

इस प्रकार फ़सल पैदा करनेवाले को केवल एक लाख रुपये मिले, जबकि फ़सल का अन्तिम विक्रय-मूल्य तीन लाख तक गया। इस कारण से उपभोक्ताओं को बहुत अधिक मूल्य देना पड़ेगा। इस प्रकार दरमियानी सट्टेबाज़ों के कारण क़ीमत कई गुना बढ़ जाती है।[1]

पिछले वर्ष तेल की क़ीमतों में असाधारण उछाल आया। इसका मौलिक कारण यही सट्टाबाज़ी था। न्यूयार्क मर्कण्टाइल एक्सचेंज में तेल से संबंधित सभी समझौतों का 18% सट्टेबाज़ी के समझौते थे। तेल और खाद्य-पदार्थ (विशेषकर चावल) के मूल्यों में 2008 में जिस प्रकार निरन्तर उछाल आता रहा, उसका मौलिक कारण उन चीज़ों में भावी सौदे थे। तेल पर होनेवाली राजनीति और संघर्ष के प्रसिद्ध शोधकर्ता फ्रेडरिक विलियम एंडाल (Frederick William Engdahl, लेखक "A Century of War : Anglo-American Oil Politics and the New World Order") ने हाल ही में प्रकाशित एक शोध लेख में यह सिद्ध किया है कि तेल की क़ीमतों का कोई संबंध माँग और सप्लाई के संतुलन से नहीं है। बल्कि कुछ बड़ी आर्थिक संस्थाओं और चार एंगलो अमेरिकन कम्पनियों की सट्टेबाज़ी से तेल की क़ीमतों में कमी और

1. फ़्यूचर्स की सामान्य जानकारी के लिए देखिए - http://www.rediff.com/getahead/2006/jan/19com.htm

बढ़ोत्तरी हो रही है।[1] इसी प्रकार चन्द्रशेखर और जयती घोष ने अपने एक लेख में खाद्य-पदार्थों के मूल्यों पर सट्टेबाज़ी के प्रभाव का अच्छा विश्लेषण किया है।[2]

हमारे देश में आवश्यक वस्तुओं में सट्टे (Commodition) पर प्रतिबंध था। 2003 में भारतीय जनता पार्टी की सरकार ने यह प्रतिबन्ध ख़त्म कर दिया और अहमदाबाद और मुम्बई में Commodeties Exchanges स्थापित किए और यह बला हमारे देश में भी आ गई।

शेयर मार्केट में सट्टा

सट्टे का दूसरा मोर्चा शेयर मार्केट है, जहाँ बजाय लम्बी अवधीय निवेश के बीच के लोग केवल अन्दाज़ों पर शेयर की क़ीमतों में कमी और बढ़ोत्तरी से लाभ कमाने (Capital gain) के लिए शेयर मार्केट में प्रवेश करते हैं। ये लोग भी विभिन्न वास्तविक और कृत्रिम कारणों से शेयर की क़ीमतों में कमी या बढ़ोत्तरी करते रहते हैं। बहुत-से लोग किसी शेयर पर क़ब्ज़ा किए बिना दिन भर केवल अनुमानों से ख़ानापुरी करते रहते हैं और शाम में कुल लाभ लेकर चल देते हैं। अर्थात् सुबह किसी ऐसे शेयर को लेकर जिसकी क़ीमत बढ़नेवाली है, ख़रीदने का वादा कर लिया जाता है तो एक-दो घण्टे बाद ही जब उसकी क़ीमत बढ़ने लगती है, वह शेयर प्राप्त होने से पहले उसे बेच दिया जाता है। इस प्रकार एक पैसा ख़र्च किए बिना और किसी चीज़ को वस्तुतः ख़रीदे या बेचे बिना लाभ प्राप्त कर लिया जाता है। शेयर मार्केट में सट्टे की विभिन्न क़िस्में हैं। इनमें "डे ट्रेडिंग" (अर्थात् किसी शेयर को ख़रीदना और उसपर क़ब्ज़ा हासिल करना और उसकी क़ीमत अदा करने से पहले, उसी दिन लाभ पर बेच देना), शार्ट सेलिंग, मार्जिन ट्रेडिंग आदि इस सट्टेबाज़ी के कुछ खुले उदाहरण हैं।

1. F. Willaim Engdahl, "60% of today's oil price is pure speculation"; Global Research; May 2008.
2. Chandrashekhar and Jayati Ghosh; "Speculation and Global Trade in Food Crops", Business Line, New Delhi, April 07, 2009.

करेंसी मार्केट में सट्टा

करेंसी की वर्ल्ड मार्केट में सट्टेबाज़ी का महत्वपूर्ण केन्द्र है। विभिन्न करेंसियों की क़ीमतों पर अनुमान किया जाता है और करेंसियाँ ख़रीदी और बेची जाती हैं। इस मार्केट में भी उद्देश्य किसी देश की करेंसी को ख़रीदना नहीं होता, बल्कि करेंसियों की क़ीमतों में संभावित अनुमान लगाकर सट्टेबाज़ी करना होता है। सट्टेबाज़ केवल अनुमान ही नहीं लगाते, बल्कि अपने अनुमानों के मुताबिक़ करेंसियों में उतार-चढ़ाव को यक़ीनी बनाने के लिए अफ़वाहें और झूठे समाचारों का बाज़ार गर्म करते हैं। देशों की आर्थिक स्थितियों के बारे में सीमा से अधिक अतिश्योक्ति के साथ अच्छी या बुरी ख़बरें आम करते हैं और अन्य कृत्रिम साधनों का प्रयोग करते हुए करेंसियों की क़ीमतों में उछाल पैदा करते हैं।

1990 ई॰ में दक्षिणी एशियाई देशों (मलेशिया, सिंगापुर, थाईलैंड) में जो आर्थिक संकट आया था और जिसके नतीजे में उन देशों की तेज़ी से विकासशील आर्थिक स्थितियाँ अचानक निम्न स्तर को पहुँच गई थीं, वह इसी करेंसी की सट्टेबाज़ी (Currency Speculation) का परिणाम था। सट्टेबाज़ों ने कुछ बड़े पूँजीपतियों को लाभ पहुँचाने के लिए बनावटी तरीक़ों से करेंसियों की क़ीमतें बढ़ाईं और उसी तेज़ी से उन क़ीमतों को गिरा दिया। परिणामस्वरूप एशियन टाइगर्स कहलानेवाले इन देशों की आर्थिक स्थिति एकदम बैठ गई। टाइम मैगज़ीन ने उन सट्टेबाज़ों के चौंका देनेवाले बयानों को रिकार्ड किया था। "हम भेड़िए हैं। हम कमज़ोरों को ख़त्म करते हैं ताकि रेवड़ की सेहत बाक़ी रहे।"[1]

सब-प्राईम कराइसिस के कारणों में ब्याज के साथ-साथ सट्टेबाज़ी की भी महत्वपूर्ण भूमिका थी। जैसा कि बताया जा चुका है कि ग़रीब क़र्ज़दारों को जो क़र्ज़ दिए गए थे, उन क़र्ज़ों को अन्य चीज़ों के साथ मिलाकर सिक्योरिटीज़ में बदल दिया गया था। ये सिक्योरिटीज़ एम॰ बी॰ एस॰ (Mortgage Based Securities) और सी॰ डी॰ ओ॰ (Collateralised Debt Obligation) के रूप में बाज़ार में बेची गईं और उनपर एक लम्बी अवधि तक सट्टेबाज़ी की गई, जिसके नतीजे में

1. Eugene Linden : "How to Kill a Tiger", Time Magazine Asia, November 3, 1997, Vol. 150, No. 18.

उनकी क़ीमतें अवास्तविक रूप से कम-ज़्यादा होने लगीं, और जब क़ीमतें अचानक कम हो गईं तो पूरी आर्थिक व्यवस्था बैठने लगी।

सट्टेबाज़ी का बड़ा नुक़सान यह होता है कि देश के धन का बड़ा हिस्सा वास्तविक उत्पादन के कामों में लगने के बजाय सट्टेबाज़ी में लगता है। उत्पादन की गतिविधियों (कामों) से अभिप्रेत औद्योगिक और व्यापारिक गतिविधियाँ हैं, अर्थात् कोई चीज़ बनाना (Production) जो उद्योगों (Industries) के द्वारा होता है या बनी हुई चीज़ों को उपभोक्ता (Consumer) तक पहुँचाना (Distribution) जो व्यापार (Trade) के द्वारा होता है। आम तौर पर पूँजीपतियों की पूँजी का बड़ा हिस्सा इन्हीं कामों में लगता रहा है। ये गतिविधियाँ समाज के लिए लाभदायक होती हैं। उत्पादन के कामों (उद्योग या व्यापार) के लिए पूँजी को लम्बे समय तक लगाए रखना पड़ता है अर्थात् Long Term Capital, और पूँजीपति को लाभ के लिए कुछ समय तक सब्र करना पड़ता है। जबकि सट्टेबाज़ी एक संक्षिप्त अवधि का कार्य (Short term process) होता है। इसमें लाभ शीघ्र मिलता है। इसलिए बहुत-से पूँजीपति अपनी पूँजी को सट्टे में लगाना चाहते हैं। इससे धन का बड़ा हिस्सा उत्पादन के कार्यों से कट जाता है। परिणामस्वरूप उत्पादन कम होता है। उत्पादन के काम पूँजीपति के साथ-साथ आबादी के बड़े हिस्से को भी लाभ पहुँचाहते हैं। उत्पादन होता है तो इससे कम्पनियों के कर्मचारी, मज़दूर, व्यापारी (Traders), उद्योगों के सम्बन्धी जन सभी लाभ उठाते हैं। जब धन उत्पादन के कामों से हटता है तो इससे केवल एक पूँजीपति को लाभ होता है और केवल धनवानों के बीच धन का विनिमय होता रहता है। इससे आम जनता को कोई लाभ नहीं होता, बल्कि रोज़गार के मौक़े कम हो जाने से बेरोज़गारी और ग़रीबी बढ़ती है, जैसा कि कहा गया। इस समय वस्तुस्थिति यह है कि कुल व्यवसाय का केवल 2 से 3 प्रतिशत वास्तविक उद्योग और व्यापार में सम्मिलित है जबकि सट्टेबाज़ी का क्षेत्र 98 प्रतिशत है।

सट्टेबाज़ी क़ीमतों में असाधारण अभिवृद्धि का कारण बनती है। इस अभिवृद्धि से वस्तु-उत्पादकों को कोई लाभ नहीं होता, बल्कि बीच के सट्टेबाज़ सारा लाभ लूट लेते हैं। इस प्रकार वस्तुओं के उत्पादक

और वस्तुओं के उपभोक्ता दोनों वर्ग नुक़सान में रहते हैं।

सट्टेबाज़ी का एक बड़ा नुक़सान यह भी है कि इससे पूरी आर्थिक व्यवस्था ग़ैर-यक़ीनी कैफ़ियत (Volatility) का शिकार रहती है। पल भर में आर्थिक स्थिति कहीं से कहीं पहुँच जाती है। स्टॉक मार्केट में हम देखते हैं कि किसी बड़े नेता को छींक भी आ जाए तो सेंसेक्स (Sensex) कहीं से कहीं पहुँच जाता है। स्पष्ट है कि छींक आने से कम्पनियों के वास्तविक लाभ पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। किन्तु सट्टेबाज़ों की आशाएँ और अन्देशे पूरी व्यवस्था को अत्यन्त संवेदनशील बना देते हैं।

मूल्यों में ये ग़ैर-यक़ीनी परिवर्तन एक ग़रीब निवेशक के लिए अत्यन्त कष्टदायक होते हैं। एक आदमी जिसने अपने जीवनभर की पूँजी स्टाक मार्केट में लगा रखी है, सेंसेक्स का अचानक बदलाव उसे एक पल में कंगाल बना देता है।

सट्टेबाज़ी के विभिन्न तरीक़े

फ़्यूचर्ज़ या फॉरवर्ड्ज़ (Futures or Forwards) : इस समझौते के तहत किसी सम्पत्ति (कोई वस्तु, करेंसी या शेयर आदि) को, भावी किसी निश्चित तिथि को या उससे पहले, आज की निश्चित की हुई क़ीमत में बेचा जाता है।

उदाहणार्थ– • A, B को कोई वस्तु एक हज़ार रुपयों में तीन महीने बाद सुपुर्द करने का वादा करता है।

- A को तीन माह बाद हर हालत में उपरोक्त वस्तु B के सुपुर्द करनी होगी और B को वह वस्तु लेनी होगी।
- तीन माह बाद उस वस्तु की क़ीमत चाहे कुछ भी हो (कम या ज़्यादा), A को एक हज़ार रुपए ही मिलेंगे।

ऑपशंस (Options)

फ़्यूचर्ज़ में और ऑप्शंस में अन्तर यह होता है कि इसमें ख़रीदनेवाले के लिए ख़रीदना आवश्यक नहीं होता, किन्तु यदि वह

ख़रीदना चाहे तो भविष्य में उसे आज की तय की गई क़ीमत पर उपरोक्त सामग्री का विक्रय करना अनिवार्य हो जाता है।

उदाहरणार्थ– • A, B को कोई वस्तु एक हज़ार रुपये में तीन महीने बाद सुपुर्द करने का वादा करता है।

• B के लिए तीन माह बाद वह वस्तु ख़रीदना ज़रूरी नहीं है।

• किन्तु अगर B ख़रीदना चाहे तो A को उपरोक्त वस्तु उसके सुपुर्द करनी होगी; और उस वक़्त उस वस्तु की क़ीमत चाहे कुछ भी हो, वस्तु के विक्रेता A को एक हज़ार रुपये ही मिलेंगे।

इसी प्रकार विकल्प (Option) विक्रय (Put-option) का भी हो सकता है। इसमें वस्तु के विक्रेता को वस्तु का विक्रय करना आवश्यक नहीं होता, किन्तु यदि वह विक्रय करना चाहे तो आज की निश्चित की हुई क़ीमत पर दूसरी पार्टी को ख़रीदना ज़रूरी हो जाता है।

स्वाप्स (Swaps)

किसी करेंसी, वस्तु (Commodity), शेयर बॉण्ड आदि के मूल्य में कमी या बढ़ने के आधार पर दो पार्टियाँ किसी निश्चित तारीख़ को नक़द रक़मों के विनिमय का समझौता करती हैं।

उदाहरणार्थ– A और B के मध्य यह समझौता होता है कि तेल की आज की क़ीमत और तीन माह बाद की क़ीमत में अन्तर को A, B को अदा करेगा। इस प्रकार यदि तेल की क़ीमत में 1000 डालर की अभिवृद्धि होती है तो A, B को 1000 डालर का भुगतान करता है और अगर 500 डालर की कमी आती है तो B, A को 500 डालर वापस करता है।

स्टॉक मार्केट में सट्टेबाज़ी के तरीक़े

शार्ट सेलिंग– यदि सट्टेबाज़ किसी शेयर के बारे में यह समझे कि उसकी क़ीमत गिरनेवाली है तो उसे वह उधार लेकर बेच देता है और क़ीमत कम होने पर कम क़ीमत में ख़रीदकर वापस कर देता है। इस प्रकार क़ीमतों के अन्तर से बिना किसी पूँजी के लाभ प्राप्त कर लेता है।

डे ट्रेडिंग— क्योंकि शाम होने पर शेयरों की मिल्कियतें स्थानान्तरित होती हैं, इसलिए सट्टेबाज़ दिन भर शेयरों का इस प्रकार क्रय-विक्रय करते हैं कि उन्हें एक पैसा भी ख़र्च नहीं करना पड़ता और शाम होने से पहले ख़रीदे हुए शेयरों को बेचकर, केवल कम्प्यूटर की ख़ानापुरी से लाभ कमाकर चल देते हैं। उदाहरणार्थ— सुबह शेयर की क़ीमत 370 थी, वे उसे ख़रीद लेते हैं (अर्थात् केवल ख़रीदने का वादा करते हैं, इसलिए कि क़ीमत का भुगतान और क़ब्ज़े का स्थानांतरण तो शाम में होता है।) कुछ देर बाद शेयर की क़ीमत 380 होती है तो उसे बेच देते हैं। 380 से एक और शेयर ख़रीदते हैं, कुछ देर बाद उसे 400 में बेच देते हैं। इस प्रकार शाम होने से पहले सारे शेयर बेचकर एक पैसा ख़र्च किए बिना और कोई शेयर लिए बग़ैर केवल सट्टेबाज़ी का लाभ लेकर चले जाते हैं।

मार्जिन ट्रेडिंग

सट्टेबाज़ ब्रोकर से शेयर ब्याज पर उधार लेता है और दिनभर उसकी ट्रेडिंग करके लाभ होने की स्थिति में क़ीमत और ब्याज लौटाकर लाभ लेकर चला जाता है।

तीसरे जगत् के क़र्ज़े

ब्याजवाले क़र्ज़े किसी देश की आन्तरिक अर्थव्यवस्था में जो तबाही मचाते हैं, उसका उल्लेख ऊपर किया गया। जब ब्याज का अभिशाप वैश्विक बाज़ारों में प्रभावी होता है तो उसके द्वारा आनेवाला विनाश अकल्पनीय होता है। आज समग्र तीसरा जगत् इस ब्याज पर दिए गए क़र्ज़ों के चंगुल में फँसा हुआ है और उन क़र्ज़ों की ज़ंजीरों में बन्दी होकर उपनिवेश का दास बना हुआ है।

ब्याज के द्वारा शोषण के लिए अनिवार्य है कि क़र्ज़ों को आम किया जाए। अतएव क़र्ज़ों की लत लगाना पूँजीवादी उपनिवेश की एक महत्वपूर्ण कार्यनीति है। पुराने समय के ब्याज खानेवाले लोग ग़रीब किसानों और मज़दूरों को क़र्ज़ देकर ब्याज के नाम पर उनकी ज़मीन-जायदादें हड़प कर जाते थे, बल्कि उनकी बहू-बेटियाँ भी ले उड़ते

थे। ठीक उसी प्रकार आधुनिक युग में साम्राज्य यही खेल ग़रीब देशों के साथ खेल रहा है।

सन् 1950 और 60 के दशक में जब एशिया और अफ़्रीक़ा के ग़रीब देश नवीन औपनिवेशिक शक्तियों की गुलामी से आज़ाद होने लगे तो उन्हें अपने नव-उपनिवेशक आक़ाओं से विरासत में क़र्ज़े मिले। 1960 में नव-स्वतंत्रता प्राप्त देशों पर 59 बिलियन डालर का क़र्ज़ थोपा गया।[1]

चक्रवृद्धि ब्याज की चमत्कारिक शक्ति से ये क़र्ज़ कुछ सालों ही में, इससे पहले कि ये नव-स्वतंत्रता प्राप्त करनेवाले देश संभलते, कहीं से कहीं पहुँच गए।

फिर इनमें से कई देशों पर साम्राज्य के मनपसन्द तानाशाहों (Dictators) को उनके सिरों पर बिठा दिया गया। इन तानाशाहों ने अपने आक़ाओं के इशारों पर उन्हीं आक़ाओं से बेपनाह क़र्ज़ लेने शुरू किए। ये क़र्ज़ या तो डिक्टेटरों की अय्याशियों के लिए लिए गए या उन तानाशाहों की हुकूमतें क़ायम रखने के लिए; गृहयुद्धों और कृत्रिम विदेशी शत्रुओं से लड़ाइयों आदि में ख़र्च किए गए। कुछ स्थितियों में शासकों ने अपना सत्ताधिकार शेष रखने के लिए प्रभावशील लोगों को रिश्वतें और रिआयतें देने आदि के लिए भी उन्हें इस्तेमाल किया। उन क़र्ज़ों का बहुत कम भाग जनता की आवश्यकताओं पर ख़र्च हुआ।

एक ओर चक्रवृद्धि ब्याज का क़हर और दूसरी ओर ग़रीब देशों की नर्म करेंसियाँ, जिनकी क़ीमतों में अपनी इच्छा के मुताबिक़ उतार-चढ़ाव लाना साम्राज्य के लिए बाएँ हाथ का खेल था, इन दोनों क़हर ढानेवाले साधनों ने उन देशों के क़र्ज़ों को हास्यास्पद सीमा तक बढ़ा दिया। नाइजीरिया के राष्ट्रपति ओबाइंजू कहते हैं—

"1985 ई॰ तक हमने कुल 5 बिलियन डालर क़र्ज़ लिया था। और अब तक हम 16 बिलियन डालर अदा कर चुके हैं, फिर

1. El Hadji Guisse; Working Paper "Effects of Debt on Human Rights"; United Nations Commissions of Human Rights. Sub-Commission on the Promotion and Protection of Human Rights; Fifty-sixth session, Items of the provisional agenda.

भी हमसे कहा जा रहा है कि (चक्रवृद्धि ब्याज के कारण) अभी 23 बिलियन डालर हम पर शेष हैं।"

यह केवल नाइजीरिया की नहीं, बल्कि तीसरी दुनिया के समस्त देशों की कहानी है। ग़रीब देशों पर कुल क़र्ज़ 540 बिलियन डॉलर था, वे इससे अधिक 550 बिलियन डॉलर अदा कर चुके हैं और अब भी उनपर 523 बिलियन डॉलर शेष हैं।[1]

ग़रीब देशों के क़र्ज़ 20 से 25 प्रतिशत वार्षिक चक्रवृद्धि ब्याज (Compound Interest) की दर पर दिए गए हैं। 25% चक्रवृद्धि ब्याज की दर का अर्थ यह होता है कि एक करोड़ रुपये का क़र्ज़ 40 वर्षों में 7500 गुना बढ़कर 7523 करोड़ रुपये का क़र्ज़ हो जाता है और 50 वर्षों में यह क़र्ज़ 70,000 गुना बढ़कर 70,064 करोड़ रुपये हो जाता है।

FV = PV (1+i)^h

FV = 100,0000* (1+25/100)^50 = 7.00640x10^11

अतः इस समय कई देश अपनी राष्ट्रीय आय का बड़ा भाग केवल ब्याज के भुगतान करने में ख़र्च करते हैं। तीसरे जगत् (ग़रीब देशों) पर 2006 के आंकड़ों के अनुसार कुल क़र्ज़ 2900 बिलियन डालर था। इस क़र्ज़ के बारे में Debt Service अर्थात् ब्याज और मूलधन की वापसी पर ये देश वार्षिक 537 बिलियन डॉलर अदा कर रहे हैं। मानो प्रतिमाह लगभग 45 बिलियन डॉलर ग़रीब देशों से अमीर देशों को स्थानांतरित हो रहे हैं। प्रायः ग़रीब देश क़र्ज़ का मूलधन वापस ही नहीं कर पाते। वे वर्षों से केवल ब्याज दे रहे हैं और उनका मूलधन (Principal) निरन्तर बढ़ता जा रहा है। 1993 ई॰ में ग़रीब देशों को यदि एक डॉलर की सहायता प्राप्त हुई थी तो उन्होंने तीन डॉलर ब्याज (या क़र्ज़ की वापसी) का भुगतान किया था। इससे उस सहायता की वास्तविकता भी बेनक़ाब हो जाती है, जो विकसित देश ग़रीब देशों को दे रहे हैं।[2]

इस भारी भुगतान के बाद उन देशों के लिए यह बिलकुल असम्भव है कि वे अपने ये क़र्ज़ अदा कर पाएँ, वे चाहे अपना सम्पूर्ण राष्ट्रीय बजट वैश्विक ब्याजख़ोरों के सुपुर्द कर दें। अतः वे उन क़र्ज़ों के चँगुल

1. Munyae M. Mulinge; "Debt relief initiatives and proverty alleviation, lessons from Africa", African Century Publications. (2005)
2. "Islamic Relief Debt Policy"; Islamic Relief Brimingham, April 2009.

में फँसे ही रहेंगे।

इस क़र्ज़ और ब्याज के कारण ये ग़रीब देश अपनी जनता की आवश्यकताएँ पूरी नहीं कर पाते। कुछ देश राष्ट्रीय बजट का आधा केवल ब्याज के अदा करने में ख़र्च करते हैं। 2009-10 ई॰ के बजट के आँकड़े बताते हैं कि हमारा देश भारत भी दस लाख करोड़ के अपने कुल ख़र्च में से 2,25,511 (दो लाख पच्चीस हज़ार पाँच सौ ग्यारह) करोड़ रुपये (अर्थात् बजट का 22%) ब्याज पर और 3,42,891 (तीन लाख बयालिस हज़ार आठ सौ इक्यानवे) करोड़ रुपये क़र्ज़ों की वापसी पर (अर्थात् 34%), इस प्रकार कुल बजट का 56 प्रतिशत सिर्फ़ क़र्ज़ों से सम्बन्धित (Debt Services) में ख़र्च करता है। जबकि शिक्षा और स्वास्थ्य पर हम (राजस्व-व्यय और योजना-व्यय के बजट से सम्बन्धित भाग मिलाकर) एक लाख करोड़ के लगभग (अर्थात् केवल 10%) ख़र्च कर रहे हैं।[1]

कहा जाता है कि तीसरी दुनिया में प्रति पाँच सेकेण्ड में एक बच्चा इस क़र्ज़ से सम्बन्धित समस्या के कारण मर जाता है। और यदि ये क़र्ज़ माफ़ कर दिए जाएँ तो अफ़्रीक़ा और ऐशिया के ग़रीब देश बहुत आसानी से अपने संसाधनों से अपनी जनता की समस्याएँ हल कर सकते हैं।[2]

यही कारण है कि इस समय सारी दुनिया में इन अत्याचारपूर्ण क़र्ज़ों की माफ़ी (Write off) का आन्दोलन चल रहा है। अर्थशास्त्र के विशेषज्ञ कहते हैं कि इन क़र्ज़ों को माफ़ करना ही एक अकेला हल बचा हुआ है। इन क़र्ज़ों (और क़र्ज़ों के सैकड़ों गुना ब्याज) के रहते हुए तीसरी दुनिया के ग़रीब देश की जनता कभी उठ ही नहीं सकती।

क़र्ज़ों का यह जाल साम्राज्यवाद को ग़रीब देशों के शोषण का अवसर देता है। कुछ लेखकों का दावा तो यह है कि क़र्ज़ों का यह बोझ

1. Ministry of Finance. Govt. of India; Union Budget 2009-10, Budget at a Glance.
2. Islamic Relief (पिछला हवाला)

ग़रीब देशों पर राजनीतिक दबाव बनाने के लिए जान-बूझकर डाला गया। (John Perkins (2004) Confessions of an Economic Hitman, Berette-Koehler, San Francisco.)

इसके बाद खेल शुरू होता है वैश्विक आर्थिक संस्थाओं का। जिस प्रकार प्राचीनकाल में ब्याज खानेवाला व्यक्ति ग़रीब मज़दूर से ब्याज़ के बदले में उसकी बीवी या बेटी उठा लेने के लिए गुण्डों को भेजता था, हमारे काल में आई॰ एम॰ एफ़॰ (International Monetory Fund) इस प्रकार के गुण्डे की भूमिका निभाता है। वह ग़रीब देशों के द्वार पर पहुँचता है और क़र्ज़ के बदले में उनकी इज़्ज़त और अस्मिता, स्वतंत्रता और उनकी स्वायत्तता, अपनी जनता की भलाई और कल्याण के लिए अपनाई जानेवाली नीतियाँ सब कुछ छीन लेने के लिए तत्पर रहता है। आई॰ एम॰ एफ़॰ वर्ल्ड बैंक और वर्ल्ड ट्रेड ऑर्गनाइज़ेशन जैसी संस्थाएँ इस उद्देश्य के लिए अत्यन्त अत्याचारपूर्ण हथकण्डे अपनाती हैं। आर्थिक संस्थाओं के इन हथकण्डों ने अब तक सौ से अधिक देशों की अर्थव्यवस्थाएँ तबाह कर दी हैं और तीसरी दुनिया के शेष देश धीरे-धीरे इसी तबाही की ओर बढ़ रहे हैं।

वैश्विक आर्थिक संस्थाएँ

वैश्विक आर्थिक संस्थाओं के द्वारा साम्राज्यवाद देशों की आर्थिक नीतियों को प्रभावित करता है और उन्हें ऐसी नीतियाँ अपनाने पर विवश करता है, जिनसे बड़े पूँजीपतियों को लाभ हो।

जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि तीसरी दुनिया को सुनियोजित ढंग से क़र्ज़ों के जाल में फँसाया गया। चक्रवृद्धि ब्याज के द्वारा उनके क़र्ज़ों को कई गुना बढ़ा दिया गया, अब उन क़र्ज़ों के भुगतान के लिए दबाव डाला जाता है। जब ग़रीब देश क़र्ज़ और उसका ब्याज अदा नहीं कर पाते तो आई॰ एम॰ एफ़॰ (IMF) उनकी सहायता और अतिरिक्त क़र्ज़ देने के लिए आगे आता है।

आई॰ एम॰ एफ़॰ का उद्देश्य

अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक निधि (International Monetory Fund) अर्थात् आई॰ एम॰ एफ़॰ की स्थापना 1945 ई॰ में हुई थी। इसका उद्देश्य यह निश्चित किया गया था कि वैश्विक अर्थव्यवस्था को स्वस्थ रखने के लिए वह देशों को ऋण देगा। यदि कोई देश आर्थिक संकट से दो-चार हो तो उसको इस संकट से निकलने के लिए क़र्ज़ देना और आर्थिक व्यवस्था एवं प्रबन्ध और स्थिरता पैदा करने में उसकी सहायता करना आई॰ एम॰ एफ़॰ का मूल कार्यक्षेत्र निश्चित किया गया था। इसके लिए देशों की आर्थिक व्यवस्था की निगरानी, तकनीकी सहयोग और ऋण जारी करना आई॰ एम॰ एफ॰ के तीन महत्वपूर्ण काम हैं। आई॰ एम॰ एफ़॰ ने इसके लिए यह कार्यनीति अपनाई है कि वह ऋण जारी करने से पहले अपनी शर्तों को मानने पर मजबूर करता है।[1] ये शर्तें स्ट्रेक्चरल ऐडजस्टमेंट प्रोग्राम (SAP) के रूप में होती हैं। इन शर्तों का पालन करने का वचन लिए बिना आई॰ एम॰ एफ़॰ किसी देश को क़र्ज़ देने के लिए तैयार नहीं होता।

यह एक अलोकतान्त्रिक संस्था है। इसमें प्रत्येक देश को समान मतदान का अधिकार प्राप्त नहीं है। बल्कि मतदानों की तादाद उस धन से निश्चित की जाती है जो किसी देश ने आई॰ एम॰ एफ़॰ के कोटा सिस्टम में लगाकर रखी है। इस प्रकार अमेरिका को कुल वोटों का 18% प्राप्त है और चार धनी देश मिलकर 38% वोटों के मालिक हैं। वोटों की इस शक्ति से सदैव आई॰ एम॰ एफ़॰ के प्रबन्धक और पदाधिकारी उन धनी देशों के पसन्द के ही बनते हैं।

परिणामस्वरूप आई॰ एम॰ एफ़॰ की समस्त नीतियाँ धनी देशों और वहाँ की बड़ी कम्पनियों के हितों के अन्तर्गत निश्चित होती हैं। आई॰ एम॰ एफ़॰ की किसी देश की सहायता करने के लिए पहली शर्त यह होती है कि वह S.A.P. के लिए तैयार हो जाए। S.A.P. वास्तव में निम्नलिखित कार्यवाइयों के संग्रह का नाम है। इन्हें हम Privatisation या Liberalisation कहते हैं—

1. "Articles of Agreement of the International Monetory Fund", at http:/www.imf.org/external/pubs/ft/aa/index.htm retrieved 15/10/2009

1. शिक्षा और स्वास्थ्य ज़ैसे जनकल्याण के कामों में ख़र्च कम किया जाए।
2. ग़रीबों को दी जानेवाली रिआयतें (Subsidies) ख़त्म की जाएँ।
3. कम्पनियों और सरकारी सम्पत्तियों के संस्थानों को निजी संस्थाओं को बेचा जाए।
4. स्थानीय आर्थिक आवश्यकताओं के बजाय निर्यातों पर ध्यान दिया जाए। खेतों में वही फ़सल उगाई जाए जो निर्यात की जा सके।
5. विदेशी कम्पनियों को काम करने और निवेश की खुली अनुमति दी जाए और इस सिलसिले में पेश आनेवाली सभी रुकावटें दूर की जाएँ।
6. जनकल्याण के कामों में ख़र्च रोकने से बची हुई पूँजी को इन्फ्रास्ट्रक्चर (Infrastructure) में लगाई जाए और अच्छे एयरपोर्ट, अच्छी सड़कें आदि बनाई जाएँ, ताकि बाहरी कम्पनियों को काम करने में सुहूलत हो।
7. श्रम-क़ानून (Labour Laws) में नर्मी लाई जाए, ताकि बड़ी कम्पनियाँ मज़दूरों और कर्मचारियों का मनमाने ढंग से शोषण कर सकें।
8. ज़मीनों और अन्य संसाधनों को (किसानों और स्थानीय बाशिन्दों से छीनकर) सस्ती क़ीमत या मुफ़्त में बड़ी कम्पनियों के सुपुर्द किए जाएं।

S.A.P. की ये शर्तें ढकी-छिपी शर्तें नहीं हैं। आई॰ एम॰ एफ़॰ जिस देश में भी सहायता के लिए जाता है, वहाँ वह इन कार्यक्रमों को बलपूर्वक लागू कराता है। स्वयं हमारे देश में चन्द्रशेखर की सरकार को इन्हीं शर्तों पर क़र्ज़ दिए गए और तुरन्त बाद नरसिंह राव की सरकार में उपरोक्त कार्यक्रम लागू किए गए।

आई॰ एम॰ एफ़॰ के साथ इन शर्तों को पूरा करने के लिए वर्ल्ड बैंक और वर्ल्ड ट्रेड ऑर्गनाइज़ेशन (W.T.O.) जैसी संस्थाएँ भी हैं। वर्ल्ड बैंक एक विकसित संस्था है, जिसका मूलोद्देश्य ग़रीबी ख़त्म करना और

ग़रीब देशों में विकासशील कार्यक्रमों को लागू करने के लिए पूँजी उपलब्ध कराना है। किन्तु वर्ल्ड बैंक भी आई॰ एम॰ एफ़॰ की तरह न्यू लिबरल नीतियों से जुड़ा हुआ है; बल्कि स्ट्रक्चरल एडजस्टमेंट की नीतियाँ आई॰ एम॰ एफ़॰ वर्ल्ड बैंक और कुछ अन्य शक्तियों के बीच उस समझौते का परिणाम है जिसे वाशिंगटन कंसेंसस (Washington Consensus) कहा जाता है। वर्ल्ड बैंक के ही भूतपूर्व अध्यक्ष जोसेफ़ स्टिग्लीट्ज़ (Joseph Stiglitz) और कैथरायन काउफ़ील्ड (Catherine Caufield) जैसे लेखकों ने अपनी किताबों में सविस्तार उल्लेख किया है कि कैसे वर्ल्ड बैंक के मन्सूबे ग़रीब देशों में बजाय ग़रीबी ख़त्म करने के, ग़रीबी और अन्य समस्याओं के बढ़ाने का कारण बन रहे हैं।

वर्ल्ड ट्रेड आर्गनाईज़ेशन वैश्विक व्यापारिक संगठन है, जो वैश्विक व्यापार को नियमबद्ध बनाने के नाम पर तरह-तरह के अत्याचारपूर्ण सिद्धान्तों को थोपती है। पेटेंट के नाम पर वे ग़रीब देशों को सस्ती दवाएँ तैयार करने से रोकती है। ग़रीब देशों को अपनी स्थानीय उद्योगों को छूटें देने से रोकती है। आयात और निर्यात में स्थानीय आवश्यकताओं के मुताबिक़ आवश्यक प्रतिबन्ध लगाने से रोकती है। धनी देशों के अमीर किसानों को रिआयतें मिलती हैं, किन्तु इस प्रकार की रिआयतें ग़रीब देशों के किसानों को नहीं मिलतीं। आवश्यक सेवाएँ (Essential Services) को प्राईवेटाइज़ कराकर उन सेवाओं को ग़रीब जनता की पहुँच से बाहर कराती है। इस प्रकार एक ऐसी व्यापारिक व्यवस्था (Trade Regime) स्थापित करती है, जो विश्व के पूँजीपतियों के लिए बेहद फ़ायदेमन्द और ग़रीब जनता के लिए कष्टदायक ही नहीं, प्राणघातक होती है।

इस्लाम का दृष्टिकोण ब्याज के सम्बन्ध में

इस्लाम ने इस शोषण की जड़ काटने के लिए ब्याज को बिलकुल अवैध (हराम) घोषित किया है। ब्याज का निषेध वैसे तो संसार के समस्त धर्मों की शिक्षाओं में मौजूद है; किन्तु इस समय विश्व स्तर पर इस्लाम ही ब्याज से मुक्त अर्थव्यवस्था का आवाहक और ध्वजावाहक है। इस्लाम ने ब्याज को अवैध (हराम) घोषित किया है और इसकी अवैधता के सम्बन्ध में अत्यन्त संवेदनशील है। इस्लाम ब्याज के किसी भी रूप को किसी भी स्थिति में बरदाश्त करने को तैयार नहीं है।

ब्याज का स्पष्ट निषेध

पवित्र क़ुरआन ने बहुत स्पष्ट शब्दों में ब्याज का निषेध किया है। कहा—

> "ऐ ईमानवालो! दो गुना और चौगुना करके ब्याज मत खाया करो, और अल्लाह से डरा करो, ताकि तुम सफलता पाओ, और उस आग से डरो जो (ख़ुदा के) अवज्ञाकारियों के लिए तैयार की गई है।" (3:130-131)

ब्याज यहूदियों की रुसवाई का महत्वपूर्ण कारण

पवित्र क़ुरआन क़हता है कि यहूदी जिन कारणों से अपमानित और रुसवा हुए और ईश्वर (अल्लाह) के प्रकोप के भागी बने, उनमें एक मुख्य कारण उनका ब्याज खाना है—

> "और उनके ब्याज लेने के कारण से, यद्यपि उनको इससे रोका गया था, और उनके लोगों का अनाधिकार माल खाने के कारण से (भी उनको दण्ड मिला), और हमने उनमें से इनकार करनेवालों (विधर्मियों) के लिए दर्दनाक यातना तैयार कर रखी हैं।" (4:161)

ब्याज बरकत ख़त्म कर देता है

पवित्र क़ुरआन यह भी कहता है कि ब्याज खाने के परिणामस्वरूप बरकत समाप्त हो जाती है और धन चाहे देखने में बढ़ता हुआ महसूस

हो रहा हो, किन्तु वास्तव में कम होने लगता है—

> "और अल्लाह ब्याज को मिटाता है (अर्थात् ब्याज धन से बरकत को ख़त्म करता है) और सदक़ा (दान-पुण्य) को बढ़ाता है। (अर्थात् दान-पुण्य के द्वारा धन की बरकत को अधिक करता है), और अल्लाह किसी भी अकृतज्ञ अवज्ञाकारी को पसन्द नहीं करता।" (2:276)
>
> और जो धन तुम ब्याज पर देते हो कि (तुम्हारी पूँजी) लोगों के धन में मिलकर बढ़ता रहे, तो वह अल्लाह की दृष्टि में नहीं बढ़ेगा। किन्तु जो धन तुम ज़कात (दान-पुण्य) में देते हो (केवल) अल्लाह की प्रसन्नता चाहते हुए, तो वही लोग (अपना धन अल्लाह के यहाँ) बढ़ानेवाले हैं। (30 : 39)

ब्याज के लिए बहानेबाज़ी शैतानी धोखा है

जो लोग ब्याज खाने के लिए हीले-बहाने करते हैं और ब्याज के कारोबार को वैध व्यापार का ही एक प्रकार होने का यक़ीन दिलाने की कोशिश करते हैं, क़ुरआन कहता है कि वे शैतानी धोखे में पड़े हुए हैं और शैतान ने उन्हें छूकर उनकी अक़्लों का अपहरण कर लिया है। क़ुरआन में है —

> "जो लोग ब्याज खाते हैं, वे (क़ियामत के दिन) खड़े नहीं हो सकेंगे, किन्तु इस प्रकार कि जैसे वह व्यक्ति खड़ा होता है जिसे शैतान (आसेब) ने छूकर बावला कर दिया हो। यह इसलिए कि वे कहते थे कि व्यापार (क्रय-विक्रय) भी तो ब्याज के सदृश है; यद्यपि अल्लाह ने व्यापार (सौदागरी) को वैध कहा है और ब्याज को अवैध ठहराया है। अतः जिसके पास उसके प्रभु की ओर से नसीहत पहुँची और वह (ब्याज खाने से) बाज़ आ गया तो जो पहले हो चुका वह उसी का है और उसका मामला अल्लाह के सुपुर्द है; और जिसने फिर भी लिया, तो ऐसे लोग नारकीय (जहन्नमी) हैं, वे उसमें सदेव रहेंगे।" (2 : 275)

ब्याज खानेवालों के विरुद्ध ख़ुदा और पैग़म्बर की ओर से युद्ध का एलान

पवित्र क़ुरआन ब्याज खानेवालों के विरुद्ध युद्ध का एलान करता है। पवित्र क़ुरआन में यह अकेली आयत है, जिसमें ईमानवालों के ख़िलाफ़ जंग का एलान किया गया है। अल्लाह का यह प्रकोप उन लोगों के लिए है जो ब्याज खाते हैं। क़ुरआन में है–

"ऐ ईमान लानेवालो! अल्लाह से डरो और जो कुछ भी ब्याज में से शेष रह गया है, छोड़ दो यदि तुम (सच्चे दिल से) ईमान रखते हो। फिर यदि तुमने ऐसा न किया तो अल्लाह और उसके पैग़म्बर की ओर से एलाने-जंग के लिए ख़बरदार हो जाओ, और यदि तुम तौबा कर लो तो तुम्हारे लिए तुम्हारे मूलधन (वैध) हैं। न तुम स्वयं अत्याचार करो और न तुमपर अत्याचार किया जाए।" (2:277-278)

ब्याज के सम्बन्ध में इस्लाम का यह बेलचक और कठोर संकल्प पैग़म्बर के पवित्र कथनों (हदीसों) में भी दिखाई देता है–

"अल्लाह के पैग़म्बर *(सल्ल.)* ने ब्याज लेनेवाले पर, देनेवाले पर, उसकी लिखा-पढ़ी करनेवाले पर, उसके लिए गवाह बननेवाले पर– सबपर लानत भेजी है और कहा कि ये सभी बराबर हैं।" (हदीस : मुस्लिम)

"ब्याज के तिहत्तर द्वार हैं, और सबसे छोटा माँ के साथ व्यभिचार करने के बराबर है।" (हदीस : हाकिम)

हमारे इस्लामी विद्वानों ने क़ुरआन और हदीस के कथनों के इस प्रकाश में ब्याज के समस्त प्रकारों को अवैध एवं हराम ठहराया है। अतएव–

(1) बैंकों के डिपाज़िट्स (जमा) से ब्याज लेना वैध (जाइज़) नहीं,

(2) पेंशन फ़ण्ड्स, इंश्योरेंस, इंवेस्टमेंट आदि से ब्याज लेना वैध नहीं।

(3) घर बनाने, कार ख़रीदने, व्यापार करने आदि के लिए ब्याज पर क़र्ज़ लेना जाइज़ नहीं।

(4) क्रेडिट कार्ड का इस्तेमाल वैध नहीं। (कुछ इस्लामी धर्मशास्त्रियों ने इसके इस्तेमाल को इस शर्त के साथ वैध होने का फ़तवा दिया है कि समय पर बिलों को अदा कर दिया जाए और ब्याज देने की स्थिति न आने पाए।)

(5) ऐसे शेयर्स ख़रीदना वैध नहीं जिसके लाभ का उल्लेखनीय भाग ब्याज पर आधारित हो। या कम्पनी की पूँजी का बड़ा भाग ब्याज पर लिए गए क़र्ज़ पर हो।

(विस्तृत जानकारी हेतु देखिए : इस्लामिक फ़िक़्ह एकेडमी इण्डिया के दूसरी, नौवीं और पन्द्रहवीं सभाओं के फ़ैसले)

इन शिक्षाओं के प्रकाश में इस शोषण का कोई अवसर ही शेष नहीं रहता जो पूँजीपति ब्याज के द्वारा कर रहा है।

इसी प्रकार इस्लाम ने जुए को हराम (अवैध) ठहराया है—

"ऐ ईमानवालो! निस्सन्देह शराब और जुआ और (पूजा के लिए) स्थापित बुत और (भाग्य मालूम करने के लिए) फ़ॉल के तीर (सभी) अपवित्र शैतानी काम हैं। अतः तुम इनसे (पूरी तरह) बचो, ताकि तुम सफलता पा जाओ। शैतान यही चाहता है कि शराब और जुए के द्वारा तुम्हारे बीच शत्रुता और द्वेष पैदा कर दे और तुम्हें अल्लाह की याद से और नमाज़ से रोक दे। फिर क्या तुम (इन दुष्टापूर्ण बातों से) बाज़ न आओगे?" (क़ुरआन, 5:90-91)

"आपसे शराब और जुए के सम्बन्ध में प्रश्न करते हैं, कह दीजिए कि इन दोनों में बड़ा गुनाह है और लोगों के लिए कुछ (सांसारिक) लाभ भी हैं; किन्तु इन दोनों का गुनाह इनके लाभ की अपेक्षा अधिक बड़ा है।"

(क़ुरआन, 2:219)

अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* ने 'ग़रर' को भी हराम (अवैध) घोषित किया है। हदीस में है—

"अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* ने धोखे के साथ ख़रीदने-बेचने से मना किया है।"

हदीस में प्रयुक्त मूल शब्द 'ग़रर' का अर्थ धोखा, फ़रेब (छल) और ऐसा व्यापार है जिसमें बेची जानेवाली वस्तु निश्चित रूप से स्पष्ट न हो। नीचे और हदीसें दी जा रही हैं जिनसे इस विषय को और अधिक समझने में सहायता मिलती है—

> "अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* ने हमल (गर्भ) के ख़रीदने से मना किया जो जानवरों के पेट में है, दूध को बेचने से मना किया जो थनों में है, ग़ुलाम को ख़रीदने से मना किया जो भागा हुआ है। वितरण से पहले माले-ग़नीमत और क़ब्ज़े से पहले सदक़ों को ख़रीदने से मना किया और एक बार जाल डालने से जो शिकार मिले उसपर मामला करने से मना किया।"
>
> (हदीस : इब्ने-माजा, दार-क़ुत्नी)

> "जिस व्यक्ति ने ग़ल्ला ख़रीदा वह उस वक़्त तक न बेचे जब तक उसपर क़ब्ज़ा न करे।"
>
> (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

> "हकीम-बिन-हिज़ाम कहते हैं कि मैंने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! मेरे पास एक व्यक्ति आता है और वह मुझसे ख़रीदना चाहता है, हालाँकि मेरे पास कुछ नहीं होता, किन्तु (उसके) ख़रीदने के बाद मैं उसके लिए बाज़ार से ख़रीद कर लाता हूँ। आप *(सल्ल.)* ने फ़रमाया, जो चीज़ तुम्हारे पास न हो उसको मत बेचो।" (अबू-दाऊद, नसाई)

> "निस्सन्देह, अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* ने मुज़ा-बिना और मुहाक़िले से मना किया है।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

पेड़ पर के कच्चे फलों को अन्दाज़े से टूटे हुए सूखे फलों के बदले बेचा जाता था। इसको 'मुज़ाबिना' कहते हैं। फ़सल को अन्दाज़े से कटे हुए ग़ल्ले के बदले बेचा जाता था इसको 'मुहाक़िला' कहते हैं।

क़ुरआन और हदीस की इन शिक्षाओं से वे समस्त व्यापार वर्जित हो जाते हैं जिनमें ख़रीदी जानेवाली चीज़ निश्चित न हो। सट्टेबाज़ी की बहुत-सी उल्लिखित शक्लें इस हदीस के अनुसार निषेध हो जाती हैं। इसी प्रकार क़ुरआन और हदीस की इन स्पष्टत शिक्षाओं के पश्चात् भविष्य के व्यापार (Future Trade) की कोई गुंजाइश शेष नहीं रहती।

अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* ने बेचने में 'मुलामिसा' और 'मनाबिज़ा' से मना किया है। (हदीस : बुख़ारी)

दो पक्ष एक-दूसरे के जिस कपड़े या सामान को छू देते उसका सौदा हो जाता था। इसको 'मुलामिसा' कहते हैं। और दो पक्ष एक-दूसरे की ओर जिस कपड़े या सामान को फेंक देते उसका सौदा हो जाता था, इसको 'मुनाबिज़ा' कहते हैं।

> "अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* ने कंकड़ी फेंकने के सौदे से रोका है।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

ये शिक्षाएँ उन समस्त व्यापारों को वर्जित कर देती हैं जिनमें लाभ-हानि का आधार असंबद्ध संयोगों पर होता है। लाटरी और जुआ भी इसी प्रकार के समझौते हैं, और करेंसी और सिक्योरिटीज़ में सट्टेबाज़ी के उपरोक्त प्रकार भी इसी के अंतर्गत आते हैं।

> "अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उधार के बदले उधार के बेचने-ख़रीदने से मना किया है।"
>
> (हदीस : दारक़ुतनी, मिश्कात)

> "अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने एक मामले में दो सौदों से मना किया है।" (हदीस)

ये हदीसें क़र्ज़ों के क्रय-विक्रय और उन पेचीदा (Derivatives) को वर्जित कर देती हैं, जिनमें एक ही समय में कई समझौते अत्यन्त जटिल तरीक़ों से सम्मिलित कर दिए जाते हैं।

इन हदीसों के प्रकाश में हमारे धर्मशास्त्रियों (उलमा) ने जो परिणाम निकाले हैं, उनमें से कुछ नीचे लिखे जा रहे हैं—

(1) भाविष्यिक व्यापार (Future Trade) चाहे वह वस्तुओं (Commodities) में हो या करेंसी में या शेयर में, प्रत्येक रूप में बिलकुल हराम (अवैध) है। 'इण्टरनेशनल इस्लामी फ़िक़्ह अकादमी' ने इस विषय पर जो प्रस्ताव स्वीकार किया है, वह इस प्रकार है।

> "इस समझौते में किसी चीज़ (कमोडिटी) के भविष्य के किसी तारीख़ में ड़िलिवरी का वादा होता है और क़ीमत डिलीवरी पर अदा होती है। इस समझौते में इसका स्पष्टीकरण नहीं होता

कि उल्लिखित वस्तु की वसूली से मुआहदा ख़त्म हो जाएगा, बल्कि किसी विपरीत समझौते से यह निरस्त हो सकता है। कमोडिटी मार्केट में सबसे अधिक इसी का चलन है, और यह मूलतः अवैध और नाजाइज़ है।"

(2) इसी प्रकार Options (विकल्प, इख़्तियार) की समस्त क़िस्में हराम (अवैध) हैं।

ये समस्त समझौते [आपशन] मौलिक रूप से अवैध (हराम) हैं इसलिए इनसे सम्बन्धित मामले भी अवैध हैं। (दे॰ इस्लामी फ़िक़ह अकादमी, उपरोक्त स्वीकृत प्रस्ताव)

(3) करेंसियों की सट्टेबाज़ी अर्थात् करेंसी में फ़्यूचर्ज़ या फ़ारवर्ड्ज़ हराम (अवैध) है। करेंसी का क्रय-विक्रय केवल इस स्थिति में जाइज़ है, जब उनका विनिमय तत्काल और उसी अवसर पर (on spot) हो। (दे॰ इस्लामी फ़िक़ह अकादमी, उपरोक्त स्वीकृत प्रस्ताव)

(4) शेयर मार्केट में केवल उतार-चढ़ाव से लाभ उठाने (Capital Gain) की नीयत से निवेश करना इस्लाम के धर्मशास्त्रियों के एक बड़े गरोह की दृष्टि में सही नहीं है।

(5) शेयर मार्केट में डे-ट्रेडिंग, मार्जिन ट्रेडिंग, शार्ट सेलिंग जाइज़ नहीं है।

(6) न केवल यह कि ब्याज पर लिए गए क़र्ज़ों को सिक्यूरिटीज़ में बदलकर उन्हें बेचना हराम (अवैध) है (कि इसकी अवैधता में ब्याज के सम्मिलित हो जाने के कारण कोई सन्देह ही नहीं हो सकता), बल्कि ऐसी कम्पनी के शेयर्स का क्रय-विक्रय भी मना है जिसके पास केवल सम्पत्तीय पूँजियाँ हैं और कोई वास्तविक (Physical) पूँजी नहीं है।[1]

इस्लाम की वैकल्पिक आर्थिक व्यवस्था

ब्याज की अवैधता, लाभ-हानि में भागीदारी पर आधारित एक मुतबादिल व्यवस्था को जन्म देती है। इसके परिणामस्वरूप निवेशक और व्यापारी व्यापार के जोखिम (Risk) में बराबर के भागीदार होते हैं।

1. इस्लामी फ़िक़ह अकादमी के प्रस्तावों के अतिरिक्त, इस प्रकार की फ़िक़ही स्पष्टीकरण के लिए देखिए : मौलाना जस्टिस तक़ी उसमानी (1995 ई॰), फ़िक़ही मक़ाले, भाग-1, ज़मज़म बुक डिपो, देवबन्द, पृ॰ 141 से 156

व्यापार अच्छा होता है तो दोनों को समानुपाती लाभ हो जाता है और जब व्यापार घाटे का शिकार होता है तो निवेशक भी हानि (घाटे) में भागीदार होता है। इस वैकल्पिक आर्थिक व्यवस्था के कई लाभ हैं।

सारा कारोबार लाभ और हानि में समानुपातिक भागीदारी के आधार पर होता है। इसी लिए इस अस्थिरता (Instability) या मंदी या तरक़्क़ी के चक्करों की कोई सम्भावना शेष नहीं रहती, जो ब्याजवाली व्यवस्था में आते रहते हैं। पूँजी की उपलब्धता, वस्तुओं का उत्पादन और उनका ख़र्च और बचत, आर्थिक व्यवस्था के इन समस्त कामों में तालमेल पैदा हो जाता है और बाज़ार की ज़रूरत के अनुसार उनमें संतुलन (Equalibrium) स्थापित रहता है।

चूँकि मंदी और उन्नति के चक्कर नहीं चलते इसलिए अचानक रोज़गार में अभिवृद्धि और अचानक रोज़गार में गिरावट जैसी स्थितियाँ भी पैदा नहीं होतीं। इसी प्रकार क़ीमतों में सन्तुलन रहता है और अचानक क़ीमतें नहीं बढ़तीं।

व्यापारी को निश्चित दर पर सौदा करना नहीं होता, बल्कि वह वास्तविक लाभ में निवेशक को शामिल करता है, इसलिए कम लाभ दर के व्यापार भी चलते हैं। जनकल्याण के कामों के लिए भी पूँजी उपलब्ध रहती है और यदि किसी समय व्यापार अधिक लाभ नहीं दें पा रहा है तब भी पूँजी बेकार नहीं रहती। इस प्रकार पूँजी के भरपूर इस्तेमाल के कारण स्टेग्फ़्लेशन (Stagflation) की संभावनाएँ बहुत कम होती हैं।

चूँकि संसार के बचत करनेवाले अरबों लोग लाभ में भागीदार होते हैं, इसलिए यदि व्यापारी ने अधिक लाभ कमाया तो उन बचत करनेवालों को भी इसी अनुपात से अधिक लाभ मिलता है। इस प्रकार धन बचत करनेवालें अरबों लोगों से कुछ व्यापारियों को स्थानांतरित नहीं होता और वैसी असमानता पैदा नहीं होती जैसी पूँजीवादी व्यवस्था में नज़र आती है।

लाभ में भागीदार होने के कारण बचत करनेवालों (जो आबादी का बहुत बड़ा हिस्सा होते हैं) का धन बढ़ता है। उनकी व्यय-शक्ति बढ़ती है, जिससे चीज़ों की माँग बढ़ती है और पूरी अर्थव्यवस्था उन्नति करती है।

इसी प्रकार ब्याज का अंत संसार से आर्थिक अन्याय, शोषण और अद्वितीय विषमता के अन्त का एक महत्वपूर्ण साधन है। प्रसिद्ध ब्रिटिश अर्थशास्त्री सर राय हरॉड ने बहुत सही कहा है–

> "It is not the profit itself, earned by services, by assiduity, by imagination, or by courage, but the continued interest accruing from the accumulation that makes that profit taker eventually appear parasitical......" (Harrod, R., Towards a Dynamic Economics, London, 1973, P-58-81.)

इसी प्रकार जुआ और ग़रर (धोखा, छल आदि) का निषेध, व्यापार की विशुद्ध शिष्टता के आधारों पर पुनर्निर्माण के मार्ग प्रशस्त करता है। एक-एक पैसा कारामद उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल होता है, या तो वस्तुओं के उत्पादन (Production) के लिए या उनके वितरण के लिए। जो कई ट्रेलियन डॉलर प्रतिदिन अल्पावधि निवेश के उद्देश्य से सट्टेबाज़ी में लग रहे हैं, वे यदि वास्तविक व्यापारिक और औद्योगिक क्रिया-कलापों की ओर परिवर्तित हो जाएँ तो संसार का नक़शा ही बिलकुल भिन्न होगा। उत्पादन (Production) और व्यापार (Trade) बढ़ जाने से रोज़गार के अवसर कई गुना बढ़ जाएँगे। अस्थिरता और परिवर्तनशीलता (Volatality) समाप्त होगी।

करेंसियों में सट्टे का अन्त करेंसियों में सुदृढ़ता पैदा करेगा और करेंसियों में ग़ैर-यक़ीनी उछाल का एक बड़ा कारण दूर कर देगा।

सट्टेबाज़ी का ख़ात्मा शेयर मार्केट में स्थिरता पैदा करेगा। पूँजी एक लम्बी अवधि तक ठहराव के साथ कम्पनियों में लगी रहेगी। शेयर मार्केट में अचानक उछाल से कम्पनियों की सम्पत्तियों में जिस प्रकार तीव्रगति से परिवर्तन आते हैं और जिसके परिणामस्वरूप उनकी आर्थिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न होती है, सट्टे से मुक्त इस्लामी व्यवस्था में इसकी सम्भावनाएँ काफ़ी कम हो जाती हैं।

इसी प्रकार जब निवेश लम्बी अवधि के लिए होगा तो बाज़ारों में दृढ़ता होगी और वस्तुओं में सट्टेबाज़ी ख़त्म होगी तो वस्तुओं की क़ीमतों में भी ठहराव आएगा। पेट्रोल और चावल की क़ीमतों में जिस प्रकार विगत वर्ष, पूरे साल पारे की तरह अस्थिरता की स्थिति रही,

इसकी सम्भावना बहुत कम होगी। वर्तमान आर्थिक संकट के नतीजे में दुनिया में बहुत-से लोग सट्टेबाज़ी से हो रही हानियों को महसूस कर रहे हैं। शार्ट सेलिंग पर कई देश प्रतिबन्ध लगा चुके हैं। सट्टेबाज़ी को हतोत्साहित करने की बातें भी हो रही हैं। हमारे देश में भी कुछ चीज़ों में फ़्यूचर्स पर पाबन्दी लग चुकी है। वारेन बफ़ेट जैसे पूँजीपति ने जटिल Derivatives को Economic Weapons of Mass Destruction ठहराया है।

राज्य के दायित्व

1. सरकार आई॰ एम॰ एफ़॰ और वर्ल्ड बैंक से अपने सम्बन्ध को अत्यन्त सीमित करे और उनसे क़र्ज़ न ले।
2. विश्व-स्तर पर ग़रीब देशों के क़र्ज़ों की माफ़ी के अभियान में हम पूरे ज़ोर-शोर के साथ भाग लें और इसके लिए वैश्विक सामान्य मत को अनुकूल बनाएँ।
3. आई॰ एम॰ एफ़॰ और वर्ल्ड बैंक का पुनर्गठन हो और इन्हें समानता, प्रजातन्त्र, न्याय और स्वतन्त्रता के सिद्धान्तों पर चलाया जाए।
4. ब्याज से मुक्त अर्थव्यवस्था की ओर सरकार पहल करे। इसके लिए अनुभवी आधारों पर ब्याज से मुक्त बैंक, इंश्योरेंस और वित्तीय संस्थानों की स्थापना हेतु मार्ग प्रशस्त करने के लिए क़ानून बनाए।
5. लाटरी, जुआ, मटका आदि पर प्रतिबंध लगाए जाएँ और इन्हें सख़्ती से रोका जाए।
6. जुए के आधुनिक रूपों, फ़्यूचर्ज़, ऑपशंज़, करेंसी फ़्यूचर्ज़, स्वाप्स आदि पर भी रोक लगाई जाए।
7. कमोडिटीज़ मार्केट को तत्काल रूप से बन्द कर दिया जाए।

हमारी कुछ पुस्तकें

☆	इस्लाम धर्म	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	अनूदित क़ुरआन मजीद	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	तलख़ीस तफ़हीमुल-क़ुरआन भाग-1	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	तलख़ीस तफ़हीमुल-क़ुरआन भाग-2	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	इंसान की आर्थिक समस्या और उसका इस्लामी हल	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	इस्लाम और सामाजिक न्याय	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	इस्लाम का नैतिक दृष्टिकोण	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	इस्लाम की आध्यात्मिक व्यवस्था	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	इस्लाम की आर्थिक व्यवस्था	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	इस्लाम की राजनीतिक व्यवस्था	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	इस्लाम की सामाजिक व्यवस्था	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	इस्लाम में पति-पत्नी के अधिकार	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	इस्लाम में मानव-अधिकार	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	इस्लामी अर्थव्यवस्था के सिद्धान्त और उद्देश्य	मौलाना सय्यद अबुल-आला मौदूदी
☆	इस्लाम और मानव एकता	मौलाना सय्यद जलालुद्दीन उमरी
☆	कमज़ोर और मज़लूम इस्लाम के साए में	मौलाना सय्यद जलालुद्दीन उमरी
☆	जनसेवा और इस्लाम	मौलाना सय्यद जलालुद्दीन उमरी

☆	इस्लाम भ्रांतियाँ और आक्षेपों का निवारण	मुहम्मद ज़ैनुल-आबिदीन मन्सूरी
☆	इस्लाम में जनसेवा	मौलाना मलिक हबीबुल्लाह क़ासमी
☆	राष्ट्रीय एकता और इस्लाम	डॉ॰ मुहम्मद अब्दुल-हक़ अन्सारी
☆	जीवनी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰)	मुहम्मद इनायतुल्लाह सुब्हानी
☆	क़ुरआन मजीद की शिक्षाएँ	मौलाना नसीम ग़ाज़ी फ़लाही
☆	क़ुरआन सबके लिए	मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ
☆	परलोक की छाया में	मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ
☆	परलोकवाद और भारतीय धर्म-ग्रन्थ	मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ
☆	हदीस शास्त्र एक परिचय	मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ
☆	हदीस सौरभ (पहला भाग)	मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ
☆	हदीस सौरभ (दूसरा भाग)	मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ
☆	हदीस क़ुदसी	मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ
☆	क़ुरआन मजीद का परिचय	मौलाना सदरुद्दीन इस्लाही
☆	वर्तमान नैतिक संकट और इस्लाम	डॉ॰ फ़ज़लुर्रहमान फ़रीदी
☆	इस्लाम में उदारता	मतीन तारिक़ बाग़पती
☆	इस्लाम में पाकी और सफ़ाई	नसीम ग़ाज़ी फ़लाही
☆	कन्या भ्रूण हत्या समस्या और निवारण	शोबा-ए-दावत
☆	क्रान्ति-दूत हज़रत मुहम्मद स॰	नईम सिद्दीक़ी
☆	क़ुरआन सन्देहों का निवारण	सनाउल्लाह
☆	राष्ट्रीय एकता और इस्लाम	डॉ॰ मुहम्मद अब्दुल हक़ अन्सारी